Examdhara Publication

हिंदी माध्यम

प्रथम संस्करण

# BPSC

# निबंध

**बीपीएससी मुख्य परीक्षा के नवीनतम पाठ्यक्रम पर आधारित**

A. निबंध लेखन; संरचना और सिद्धांत

B. विगत वर्षों में बीपीएससी परीक्षा में पूछे गए निबंध

C. बीपीएससी परीक्षा के लिए महत्वपूर्ण मॉडल निबंध

D. बिहार में प्रचलित प्रमुख लोकोक्तियाँ एवं अर्थ

E. निबंध के लिए उपयोगी उद्धरण

**190+ प्रीवियस ईयर तथा मॉडल निबंधों का संग्रह**

**बीपीएससी मुख्य परीक्षा के लिए उपयोगी**

# विषय-सूची

## A. निबंध लेखन; सिद्धांत और संरचना


| क्रमांक | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1. | भूमिका (निबंध लेखन का महत्व और उपयोगिता) | A-2 |
| 2. | BPSC में निबंध का प्रारूप और विश्लेषण | A-2 |
| 3. | UPSC और BPSC के निबंध में अंतर | A-3 |
| 4. | निबंध और इसके प्रकार | A-4 |
| 5. | निबंध लेखन की शैलियाँ | A-6 |
| 6. | निबंध लेखन की विधि | A-8 |
| 7. | विचार-मंथन और उसके स्तंभ | A-10 |
| 8. | भूमिका लेखन की कला | A-12 |
| 9. | निष्कर्ष लेखन की कला | A-13 |
| 10. | लोकोक्ति, मुहावरे और कहावतें : महत्व व प्रयोग | A-15 |
| 11. | अच्छे निबंध के गुण, अवयव एवं त्रुटियाँ | A-17 |
| 12. | BPSC निबंध की तैयारी में Previous Year Papers का महत्व | A-21 |


## B. विगत वर्षों में बीपीएससी परीक्षा में पूछे गए निबंध

### खंड-1: अमूर्त निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1 | समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की महत्ता (70वीं BPSC) | B-2 |
| 2 | देश का विकास और सूचना प्रौद्योगिकी (70वीं BPSC) | B-3 |
| 3 | पर्यावरण असन्तुलन सृष्टि का विनाशक है (70वीं BPSC) | B-4 |
| 4 | भूमि संरक्षण और जैविक खेती (70वीं BPSC) | B-6 |
| 5 | विज्ञान और प्रौद्योगिकी ब्रह्मांड के रहस्यों को जानने में सहायक हैं (69वीं BPSC) | B-7 |
| 6 | कृषि व्यवस्था में सुधार कर देश के ग्रामीण अर्थतंत्र को सशक्त बना सकते हैं (69वीं BPSC) | B-8 |
| 7 | काले धन की अर्थव्यवस्था अपराध और भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है (69वीं BPSC) | B-10 |
| 8 | आधुनिक संचार क्रांति ने मानव के संचार के साधनों और टेक्नोलॉजी के प्रति जागरूकता में क्रांतिकारी रूप से वृद्धि की है (69वीं BPSC) | B-11 |
| 9 | जंगल अपने पेड़ स्वयं तैयार करता है। यह लोगों के जंगल में आकार बीज फेंकने का इंतजार नहीं करता है। (68वीं BPSC) | B-12 |
| 10 | साहित्य ज्ञान का केवल एक स्रोत ही नहीं है, साथ ही वह नैतिक और सामाजिक क्रिया का भी एक रूप है। (68वीं BPSC) | B-13 |
| 11 | अपने अनिवार्य कर्तव्य का पालन करें क्योंकि कर्म निश्चय ही निष्क्रियता से उत्तम है। (68वीं BPSC) | B-15 |
| 12 | उत्कृष्ट कला हमारे अनुभव को प्रकाशित करती है या सत्य को उद्घाटित करती है। (68वीं BPSC) | B-16 |

## खंड-2: मूर्त निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 13 | राजनीतिक इच्छाशक्ति और देश की सुरक्षा (70वीं BPSC) | B-18 |
| 14 | भ्रष्टाचार का अन्त और देश का उत्थान (70वीं BPSC) | B-19 |
| 15 | शिथिल कानून और व्यवस्था नारी सशक्तीकरण की बाधा (70वीं BPSC) | B-20 |
| 16 | विश्व-कल्याण आध्यात्मिक चेतना के बिना असम्भव है (70वीं BPSC) | B-22 |
| 17 | महिला सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति राजनैतिक सशक्तिकरण के परिप्रेक्ष्य में (69वीं BPSC) | B-23 |
| 18 | आध्यात्मिक उन्नति तथा शारीरिक एवं मानसिक विकास के लिए योग की आवश्यकता और महत्त्व (69वीं BPSC) | B-24 |
| 19 | नई शिक्षा नीति, 2023 के फायदे और नुकसान (69वीं BPSC) | B-25 |
| 20 | भारतीय कृषि पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव तथा बचाव के उपाय (69वीं BPSC) | B-26 |
| 21 | हम इतिहास-निर्माता नहीं हैं, बल्कि हम इतिहास द्वारा निर्मित हैं (68वीं BPSC) | B-27 |
| 22 | इंटरनेट ने हमारे संसार को विश्वगाँव में बदल दिया है (68वीं BPSC) | B-29 |
| 23 | विचार जीवन का आधार है (68वीं BPSC) | B-30 |
| 24 | कोविड के बाद बदलाव माँगती शिक्षा (68वीं BPSC) | B-31 |


## खंड-3: स्थानीय लोकोक्ति पर आधारित निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 25 | बनले के साथी सब केहू ह अउरी बिगड़ले के केहु नाहीं (70वीं BPSC) | B-33 |
| 26 | जिअते माछी नाहीं घोंटाई (70वीं BPSC) | B-34 |
| 27 | बापक नाम साग पात आ बेटाक नाम परोर (70वीं BPSC) | B-35 |
| 28 | जइसन बोअबड ओइसने कटबड (70वीं BPSC) | B-36 |
| 29 | बिन समाज के बोली हो सकेला का, बिन बोली (भाषा) समाज हो सकेला का (69वीं BPSC) | B-38 |
| 30 | धोबियक कुकुर ने घर के ने घाट के (69वीं BPSC) | B-39 |
| 31 | आगु नाथ ने पालू पगहा, बिना छान के कूदे गधा (69वीं BPSC) | B-41 |
| 32 | अनेर धुनेर के राम रखवार (69वीं BPSC) | B-42 |
| 33 | धर्म के बिना विज्ञान नाङ्गर (लंगड़ा) छै, विज्ञान के बिना धर्म आन्हर (अँधा) छै (68वीं BPSC) | B-43 |
| 34 | पानी में मछरिया, नौ-नौ कुटिया बखरा (68वीं BPSC) | B-44 |
| 35 | अगिला खेती आगे-आगे, पछिला खेती भागे-जागे (68वीं BPSC) | B-45 |
| 36 | मूस मोटइहें, लोढ़ा होइहें, ना हाथी, ना घोड़ा होइहें (68वीं BPSC) | B-47 |

## C. मॉडल निबंधों का संकलन

### खंड-1: अमूर्त निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1 | जीवन का अर्थ और उद्देश्य क्या है? | C-2 |
| 2 | समय का सदुपयोग क्यों आवश्यक है? | C-3 |
| 3 | सफलता में असफलता की भूमिका। | C-5 |
| 4 | समाज में नैतिकता का महत्व। | C-6 |
| 5 | विज्ञान और तकनीक का मानव जीवन पर प्रभाव। | C-7 |
| 6 | शिक्षा: ज्ञान का माध्यम या चरित्र निर्माण का साधन? | C-8 |
| 7 | मनुष्य और प्रकृति के संतुलन की आवश्यकता। | C-9 |
| 8 | स्वतंत्रता के साथ जिम्मेदारी का संबंध। | C-11 |
| 9 | समाज में सहिष्णुता और समरसता का महत्व। | C-12 |
| 10 | जीवन और मृत्यु पर आपका दार्शनिक दृष्टिकोण। | C-13 |
| 11 | जीवन में आशा और निराशा का प्रभाव। | C-14 |
| 12 | कल्पना और वास्तविकता के बीच अंतर। | C-15 |
| 13 | आधुनिकता और सांस्कृतिक मूल्यों के बीच संतुलन। | C-16 |
| 14 | आस्था और तर्क में संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता। | C-18 |
| 15 | आडम्बर और सादगी का संघर्ष: सामाजिक जीवन पर प्रभाव। | C-19 |
| 16 | मित्रता का सामाजिक एवं व्यक्तिगत महत्व। | C-20 |
| 17 | आत्म-निरीक्षण का जीवन में स्थान। | C-21 |
| 18 | सफलता प्राप्ति में समर्पण की भूमिका। | C-22 |
| 19 | प्रेम के विविध रूप और उनका मानव जीवन पर प्रभाव। | C-23 |
| 20 | सहिष्णुता की आवश्यकता किन परिस्थितियों में होती है? | C-24 |
| 21 | स्वास्थ्य और मानसिक शांति के लिए योग का महत्व। | C-26 |
| 22 | परिवर्तन स्वीकारने की आवश्यकता। | C-27 |
| 23 | आधुनिक जीवन में तकनीक का सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव। | C-28 |
| 24 | संयम और जीवन में संतुलन बनाए रखने के उपाय। | C-30 |
| 25 | धैर्य का महत्व और सफलता से उसका संबंध। | C-31 |
| 26 | समाज में संवाद और सहमति की भूमिका। | C-32 |
| 27 | नैतिक मूल्यों के विघटन से समाज पर प्रभाव। | C-34 |
| 28 | आत्मनिर्भरता की आवश्यकता और उसके विकास के उपाय। | C-35 |
| 29 | सौंदर्य और कल्याणकारी जीवन के बीच संबंध। | C-36 |
| 30 | व्यक्तित्व विकास में नैतिक शिक्षा की भूमिका। | C-38 |

## खंड-2: मूर्त निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1 | भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तीकरण की वर्तमान स्थिति : राजनीतिक सहभागिता के विशेष संदर्भ में | C-40 |
| 2 | 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा : भारत जैसे विविध लोकतंत्र में संभावनाएँ और चुनौतियाँ | C-41 |
| 3 | अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता : लोकतंत्र की आत्मा और उसकी संवैधानिक सीमाएँ | C-43 |
| 4 | अमृतकाल की अवधारणा : सुशासन और विकसित भारत की ओर यात्रा | C-44 |
| 5 | आरक्षण नीति : सामाजिक न्याय की उपलब्धि या नए विवादों का कारण | C-45 |
| 6 | ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन : पारदर्शिता एवं दक्षता की नई संभावनाएँ | C-46 |
| 7 | जाति आधारित जनगणना : सामाजिक समावेशन का माध्यम या राजनीतिक ध्रुवीकरण | C-48 |
| 8 | न्यायिक प्रक्रिया में विलंब : क्या विलंब से मिला न्याय, न्याय से वंचित होने के समान है? | C-49 |
| 9 | पंचायती राज व्यवस्था : ग्रामीण लोकतंत्र का सशक्त माध्यम या स्थानीय राजनीति का अखाड़ा | C-50 |
| 10 | भ्रष्टाचार : लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति जनविश्वास का क्षरण | C-51 |
| 11 | राजनीति के अपराधीकरण का बढ़ता प्रभाव : भारतीय लोकतंत्र के लिए एक गंभीर चुनौती | C-53 |
| 12 | राजनीति में मुफ्त योजनाओं (Freebies) की संस्कृति : सामाजिक न्याय या राजकोषीय संकट | C-54 |
| 13 | राजनीति में युवाओं की बढ़ती भूमिका : लोकतंत्र के भविष्य की उम्मीद | C-55 |
| 14 | संसदीय लोकतंत्र में सशक्त विपक्ष की भूमिका और प्रासंगिकता | C-56 |
| 15 | 21वीं सदी में जाति व्यवस्था : सामाजिक न्याय की नई चुनौतियाँ | C-58 |
| 16 | अंतरजातीय विवाह : जातिवाद उन्मूलन का प्रभावी माध्यम या सीमित समाधान | C-59 |
| 17 | कार्यस्थल पर लैंगिक समानता : कानून और व्यवहार के बीच अंतर | C-60 |
| 18 | जनसंख्या नियंत्रण कानून : सामाजिक आवश्यकता या व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर अंकुश | C-62 |
| 19 | ट्रांसजेंडर समुदाय : अधिकार, स्वीकृति और सशक्तीकरण | C-63 |
| 20 | नशामुक्त बिहार : नीति, सामाजिक व्यवहार और वास्तविकता | C-64 |
| 21 | बेरोजगारी और युवाओं में बढ़ता सामाजिक असंतोष | C-66 |
| 22 | मासिक धर्म अवकाश : स्वास्थ्य, समानता और कार्यसंस्कृति | C-67 |
| 23 | वैवाहिक बलात्कार : कानून, समाज और नैतिकता की कसौटी | C-68 |
| 24 | समान नागरिक संहिता : सामाजिक समरसता की दिशा में एक कदम | C-70 |
| 25 | MSME क्षेत्र : रोजगार सृजन और आर्थिक विकास की रीढ़ | C-71 |
| 26 | आत्मनिर्भर भारत अभियान : अवधारणा और व्यवहार | C-72 |
| 27 | कौशल विकास : जनसांख्यिकीय लाभांश को अवसर में बदलने की कुंजी | C-74 |
| 28 | गिग इकोनॉमी : रोजगार का नया स्वरूप और श्रमिक अधिकार | C-75 |
| 29 | जनसंख्या : आर्थिक बोझ या विकास का अवसर | C-77 |
| 30 | न्यूनतम समर्थन मूल्य : किसानों की आय और बाजार संतुलन | C-78 |
| 31 | पलायन और बिहार की अर्थव्यवस्था : कारण और समाधान | C-79 |
| 32 | महिला श्रम भागीदारी : आर्थिक विकास का अधूरा एजेंडा | C-81 |
| 33 | समावेशी विकास : विकास का मानव-केंद्रित दृष्टिकोण | C-82 |

| | | |
|---|---|---|
| 34 | स्टार्टअप इंडिया : नवाचार से आर्थिक आत्मनिर्भरता तक | C-84 |
| 35 | हर आपदा एक अवसर : आर्थिक पुनर्निर्माण की संभावनाएँ | C-85 |
| 36 | जलवायु परिवर्तन : मानव गतिविधियों का पर्यावरण पर बढ़ता प्रभाव | C-87 |
| 37 | सतत विकास : विकास और पर्यावरण के बीच संतुलन की अनिवार्यता | C-88 |
| 38 | पर्यावरण संरक्षण : वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों की साझा जिम्मेदारी | C-89 |
| 39 | औद्योगीकरण और पर्यावरण : विकास की कीमत पर विनाश का खतरा | C-91 |
| 40 | हरित ऊर्जा : भारत के सतत भविष्य की आधारशिला | C-92 |
| 41 | नवीकरणीय ऊर्जा संक्रमण : चुनौतियाँ और संभावनाएँ | C-93 |
| 42 | नदी जोड़ परियोजना : जल संकट का समाधान या पर्यावरणीय जोखिम | C-95 |
| 43 | जल संकट : 21वीं सदी की सबसे बड़ी पर्यावरणीय चुनौती | C-96 |
| 44 | जैविक खेती : पर्यावरण संरक्षण और खाद्य सुरक्षा का विकल्प | C-98 |
| 45 | प्लास्टिक प्रदूषण : एकल उपयोग प्लास्टिक पर प्रतिबंध की आवश्यकता | C-99 |
| 46 | वायु प्रदूषण : शहरी जीवन के लिए गंभीर खतरा | C-101 |
| 47 | जल प्रदूषण : नदियों के अस्तित्व पर संकट | C-102 |
| 48 | ठोस अपशिष्ट प्रबंधन : स्वच्छ पर्यावरण की अनिवार्यता | C-104 |
| 49 | ग्रीन टेक्नोलॉजी : पर्यावरण संरक्षण की नई दिशा | C-105 |
| 50 | कार्बन उत्सर्जन और वैश्विक तापवृद्धि | C-107 |
| 51 | पर्यावरणीय आपदाएँ : मानव हस्तक्षेप का परिणाम | C-108 |
| 52 | विकास बनाम पर्यावरण : एक अपरिहार्य द्वंद्व | C-110 |
| 53 | प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन : भविष्य के लिए खतरा | C-111 |
| 54 | भविष्य या तो हरा होगा या नहीं होगा | C-113 |
| 55 | विज्ञान और प्रौद्योगिकी : मानव जीवन को सरल बनाने से लेकर नई चुनौतियाँ उत्पन्न करने तक | C-114 |
| 56 | आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उदय : मानव भविष्य के लिए अवसर या खतरा | C-115 |
| 57 | डिजिटल इंडिया अभियान : तकनीकी सशक्तीकरण की दिशा में एक बड़ा कदम | C-116 |
| 58 | साइबर सुरक्षा : डिजिटल युग में राष्ट्रीय सुरक्षा की नई चुनौती | C-118 |
| 59 | डिजिटल शिक्षा : ज्ञान के लोकतंत्रीकरण की दिशा या नई असमानता | C-120 |
| 60 | तकनीकी युग में बदलाव माँगती शिक्षा व्यवस्था | C-121 |
| 61 | डेटा प्राइवेसी और डिजिटल अधिकार : नागरिक स्वतंत्रता का प्रश्न | C-123 |
| 62 | चंद्रयान-3 : विज्ञान, प्रौद्योगिकी और मानव भविष्य का संगम | C-124 |
| 63 | अंतरिक्ष अनुसंधान : राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और वैज्ञानिक आत्मनिर्भरता | C-126 |
| 64 | विज्ञान एवं तकनीक में आत्मनिर्भर भारत की अवधारणा | C-127 |
| 65 | जैव प्रौद्योगिकी : स्वास्थ्य, कृषि और नैतिक प्रश्न | C-128 |
| 66 | विज्ञान और नैतिकता : तकनीकी प्रगति की सीमाएँ | C-130 |
| 67 | इंटरनेट शटडाउन : सुरक्षा बनाम अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता | C-131 |
| 68 | ओटीटी प्लेटफॉर्म और सेंसरशिप : अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रभाव | C-133 |

| | | |
|---|---|---|
| 69 | डिजिटल भुगतान प्रणाली : कैशलेस अर्थव्यवस्था की दिशा | C-134 |
| 70 | विज्ञान और तकनीक का पर्यावरण पर प्रभाव | C-136 |
| 71 | बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के उदय में भारत की भूमिका : अवसर और चुनौतियाँ | C-137 |
| 72 | बदलते वैश्विक शक्ति संतुलन के बीच भारत की विदेश नीति की प्राथमिकताएँ | C-139 |
| 73 | भारत–चीन संबंधों की जटिलता : सहयोग, प्रतिस्पर्धा और संघर्ष के आयाम | C-140 |
| 74 | इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में भारत की भूमिका : समुद्री सुरक्षा और कूटनीति | C-142 |
| 75 | क्वाड (QUAD) समूह : एशिया-प्रशांत राजनीति में भारत का रणनीतिक महत्व | C-143 |
| 76 | ब्रिक्स (BRICS) के विस्तार का वैश्विक आर्थिक एवं राजनीतिक प्रभाव | C-145 |
| 77 | G20 में भारत का नेतृत्व : वैश्विक दक्षिण की आवाज़ के रूप में उभरता भारत | C-147 |
| 78 | जलवायु कूटनीति में भारत की भूमिका : विकास और पर्यावरण का संतुलन | C-148 |
| 79 | साइबर युद्ध और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा : भारत की तैयारी | C-149 |
| 80 | आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और वैश्विक शासन : नैतिक एवं रणनीतिक प्रश्न | C-151 |
| 81 | अंतरिक्ष कूटनीति : भारत की बढ़ती वैश्विक उपस्थिति | C-153 |
| 82 | सीमा पार आतंकवाद : वैश्विक चुनौती और भारत का कूटनीतिक दृष्टिकोण | C-154 |
| 83 | शरणार्थी संकट और वैश्विक नैतिक जिम्मेदारी | C-156 |
| 84 | 21वीं सदी में भारत की विदेश नीति : शक्ति, नैतिकता और संतुलन | C-157 |
| 85 | साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि उसका मार्गदर्शक भी है | C-158 |
| 86 | संस्कृति और साहित्य : एक-दूसरे के पूरक तत्व | C-160 |
| 87 | साहित्य, संस्कृति और राजनीति के बीच अंतर्संबंध | C-161 |
| 88 | समावेशी समाज के निर्माण में साहित्य की भूमिका | C-163 |
| 89 | मनुष्यता को बचाए रखने के लिए साहित्य की आवश्यकता | C-164 |
| 90 | साहित्य केवल ज्ञान का स्रोत नहीं, बल्कि सामाजिक क्रिया का माध्यम है | C-166 |
| 91 | साहित्य और सिनेमा : समाज निर्माण के दो प्रभावशाली माध्यम | C-167 |
| 92 | हम इतिहास निर्माता नहीं, बल्कि इतिहास द्वारा निर्मित हैं : साहित्यिक विवेचन | C-168 |
| 93 | इतिहास स्वयं को दोहराता है : साहित्य और दर्शन के आलोक में | C-169 |
| 94 | डिजिटल युग में साहित्य की प्रासंगिकता | C-171 |
| 95 | साहित्य और जनतंत्र : अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता | C-172 |
| 96 | बिहार चुनावों में महिला मतदाता की भूमिका | C-173 |
| 97 | बिहार की राजनीति में युवा नेतृत्व का महत्त्व | C-175 |
| 98 | चुनावी गठबंधन और बिहार की राजनीति पर उनका प्रभाव | C-176 |
| 99 | बिहार में महिला शिक्षा और सशक्तिकरण की चुनौतियाँ | C-178 |
| 100 | बिहार में बाढ़ की समस्या और समाधान | C-179 |
| 101 | मगही, मैथिली और भोजपुरी साहित्य का संरक्षण | C-180 |
| 102 | बिहार की लोक कला और साहित्य का महत्व | C-182 |
| 103 | नशा मुक्त बिहार और खुशहाल परिवार | C-183 |

| | | |
|---|---|---|
| 104 | बिहार की संस्कृति पर बुद्ध की छाप | C-185 |
| 105 | बिहार की संस्कृति पर महावीर की छाप | C-186 |


## खंड-3: स्थानीय लोकोक्ति पर आधारित निबंध


| क्रमांक | निबंध | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1 | अधिका जोगी मठ के उजार | C-188 |
| 2 | अभागा गइने ससुरारी अउरी उहवों माँड़े-भात | C-189 |
| 3 | आगे नाथ ना पीछे पगहा, खा मोटा के भइने गदहा | C-190 |
| 4 | आपन पुतवा पुतवा ह अउरी सवतिया के पुतवा दूतवा ह | C-191 |
| 5 | इहे छउड़ी इहे गाँव, पूछे छउड़ी कवन गाँव | C-193 |
| 6 | एक मुट्ठी लाई, बरखा ओनिये बिलाई | C-194 |
| 7 | एक हाथ के ककरी अउरी नौ हाथ के बिआ | C-195 |
| 8 | ककरो बोरे-बोरे नून, ककरो रोटियो पर आफत | C-196 |
| 9 | काली माई करिया, भवानी माई गोर | C-198 |
| 10 | केरा (केला), केकड़ा, बिछू, बाँस इ चारो की जमले नाश | C-199 |
| 11 | घर के जोगी जोगड़ा, आन गाँव के सिद्ध | C-200 |
| 12 | जइसन माई ओइसन धिया, जइसन काकड़ ओइसन बीया | C-202 |
| 13 | जीअत पर छूछ भात, मरले पर दूध भात | C-203 |
| 14 | जे गुड़ खाई उ कान छेदाई | C-204 |
| 15 | ढुलमुल बेंट कुदारी अउरी हँसी के बोले नारी | C-206 |
| 16 | नया लुगा नौ दिन, लुगरी बरीस दिन | C-207 |
| 17 | बनले के साथी सब केहू ह अउरी बिगड़ले के केहु नाहीं | C-208 |
| 18 | बिलइया के नजर मुसवे पर | C-210 |
| 19 | मन में आन, बगल में छुरी, जब चाहे तब काटे मूरी | C-211 |
| 20 | माई के जिअरा गाई अइसन, बाप के जिअरा कसाई अइसन | C-212 |
| 21 | लाल, पीयर जब होखे अकास, तब नइखे बरसा के आस | C-214 |
| 22 | सुपवा हंसे चलनिया के कि तोरा में सतहत्तर छेद | C-215 |
| 23 | सोना लुटाय और कोयले पर छापा | C-216 |
| 24 | बाप के नाम लत्ती-फत्ती, बेटा के नाम कदीमा | C-218 |
| 25 | हरबरी के बियाह में कनपट्टी पर सिन्दूर | C-219 |

- **बिहार में प्रचलित प्रमुख लोकोक्तियाँ एवं अर्थ ............................................................ D-1**
- **निबंध के लिए उपयोगी उद्धरण........................................................................ E-1**

# A निबंध लेखन; संरचना और सिद्धांत

## 1. भूमिका (निबंध लेखन का महत्व और उपयोगिता)

बिहार लोक सेवा आयोग (BPSC) द्वारा 68वीं संयुक्त प्रतियोगिता परीक्षा से निबंध को एक स्वतंत्र पेपर के रूप में पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। हालांकि, संघ लोक सेवा आयोग (UPSC) में निबंध पेपर की शुरुआत 1992 में एस. चन्द्रा समिति की सिफारिशों के बाद हुई थी। निबंध पेपर को शामिल करने का मुख्य उद्देश्य अभ्यर्थियों की नीति-निर्णयन क्षमता, बहुआयामी दृष्टि और विश्लेषणात्मक सोच को परखना है।

वर्तमान समय में BPSC परीक्षा के संदर्भ में निबंध पेपर का महत्व सामान्य अध्ययन के पेपरों से भी अधिक बढ़ गया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि सामान्य अध्ययन के प्रश्न अब अधिक गत्यात्मक (Dynamic) और सूक्ष्म हो गए हैं, जिससे औसत अंक अपेक्षाकृत घट गए हैं। इस स्थिति में निबंध का पेपर अधिक अंकदायी सिद्ध हो रहा है।

हिंदी माध्यम के विद्यार्थियों के लिए निबंध पेपर एक **वरदान** की तरह साबित हो रहा है। अंग्रेज़ी माध्यम के छात्रों को सामान्य अध्ययन में जहाँ सामग्री की प्रचुरता के कारण बढ़त मिलती है, वहीं निबंध के क्षेत्र में हिंदी माध्यम के अभ्यर्थी अपनी भाषा, रचनात्मकता और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के माध्यम से बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

निबंध लेखन केवल विषय ज्ञान का प्रदर्शन नहीं, बल्कि अभिव्यक्ति की एक कला है — जिसमें **विचारों की तार्किकता**, **भावनाओं की गहराई**, और **भाषा की सौंदर्यता** तीनों का समन्वय आवश्यक है। यह कला कठिन अवश्य है, किंतु असंभव नहीं। नियमित अभ्यास, सही दिशा और विषय की व्यापक समझ के माध्यम से इस क्षेत्र में प्रवीणता हासिल की जा सकती है।

निबंध लेखन का अभ्यास अभ्यर्थी को न केवल परीक्षा में उच्च अंक दिलाने में मदद करता है, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में — निर्णय क्षमता, चिंतन शक्ति, और अभिव्यक्ति कौशल — को विकसित करता है। अतः निबंध लेखन केवल परीक्षा की दृष्टि से नहीं, बल्कि व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से भी अत्यंत आवश्यक है।

## 2. BPSC में निबंध का प्रारूप और विश्लेषण

Bihar Public Service Commission (BPSC) की मुख्य परीक्षा में निबंध का पेपर अभ्यर्थियों के **विचार, विश्लेषण और भाषा कौशल** को परखने के लिए डिज़ाइन किया गया है। BPSC निबंध का पैटर्न UPSC से अलग है क्योंकि इसमें **तीन खंडों में निबंध लिखने होते हैं**, और तीसरा खंड लोक साहित्य और स्थानीय भाषा से जुड़ा होता है।

BPSC में निबंध पेपर तीन भागों में विभाजित होता है:

### खंड-1: अमूर्त निबंध (Abstract Essay)

- यह खंड **कल्पना, दर्शन या विचार प्रधान विषय** पर आधारित होता है।
- ज्ञानेंद्रियों द्वारा प्रत्यक्ष अनुभव से प्राप्त न होकर, **विचार और दृष्टिकोण** से लिखा जाता है।
- **उद्देश्य:** अभ्यर्थी की दार्शनिक सोच, विश्लेषणात्मक क्षमता और बहुआयामी दृष्टि का परीक्षण।
- **उदाहरण:**
  - सत्य जीवन का आधार है
  - ज्ञान का महत्व और समाज में इसका योगदान

### खंड-2: मूर्त निबंध (Concrete Essay)

- इस खंड में छात्र को **वास्तविक या ठोस विषय** पर निबंध लिखना होता है।
- यह विषय **सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक या भौगोलिक दृष्टि** से प्रत्यक्ष अनुभव या तथ्य पर आधारित होता है।

- **उद्देश्य:** अभ्यर्थी की तथ्यात्मक जानकारी और व्यावहारिक विश्लेषण क्षमता का आकलन।
- **उदाहरण:**
    - भारतीय कृषि का वर्तमान परिदृश्य
    - शहरीकरण और ग्रामीण जीवन पर प्रभाव

## खंड-3: लोकोक्ति / मुहावरा आधारित निबंध (Proverbs/Idioms Based Essay)

- तीसरे खंड में अभ्यर्थी को **किसी प्रसिद्ध कहावत, मुहावरा या अनुवादित कथन** पर निबंध लिखना होता है।
- **उद्देश्य:**
    - अभ्यर्थी की **स्थानीय भाषा, संस्कृति और साहित्यिक समझ** को परखना।
    - सोचने और विश्लेषण करने की क्षमता का परीक्षण।
- **उदाहरण:**
    - "नीम हकीम खतरे जान" → स्वास्थ्य जागरूकता या विशेषज्ञता की भूमिका पर।
    - "मूस मोटइहें, लोढ़ा होइहे" → समाज में शक्ति संतुलन और सामाजिक व्यावहारिकता पर।
- यह खंड अन्य खंडों की तुलना में **अधिक चुनौतीपूर्ण** है क्योंकि इसमें **लोक साहित्य, बोली और सांस्कृतिक संदर्भ** का ज्ञान होना आवश्यक है।

# 3. UPSC और BPSC के निबंध में अंतर

निबंध लेखन दोनों ही आयोगों में महत्वपूर्ण है, लेकिन **UPSC** और **BPSC** के निबंध में कई महत्वपूर्ण अंतर हैं, जो परीक्षार्थियों के दृष्टिकोण, तैयारी और रणनीति को प्रभावित करते हैं।

## A. निबंध की संख्या (Number of Essays)

| आयोग | निबंध की संख्या | विवरण |
|---|---|---|
| UPSC | 2 | अभ्यर्थी को केवल **दो निबंध** लिखने होते हैं। ये मूर्त और अमूर्त विषयों पर आधारित होते हैं। |
| BPSC | 3 | अभ्यर्थी को **तीन निबंध** लिखने होते हैं। ये मूर्त, अमूर्त और **लोकोक्ति/मुहावरा/कहावत** पर आधारित होते हैं। |

## B. लेखन की शैली और संरचना (Writing Style & Structure)

| आयोग | शैली | विवरण |
|---|---|---|
| UPSC | तात्विक और विश्लेषणात्मक | निबंध में विचार और दार्शनिक दृष्टिकोण को प्रमुखता दी जाती है। लेखक की राय सीमित रूप में होती है, विषय की बहुआयामी व्याख्या अपेक्षित होती है। |
| BPSC | सांस्कृतिक, साहित्यिक और विश्लेषणात्मक | निबंध में तात्विक और विश्लेषणात्मक क्षमता के साथ-साथ **स्थानीय भाषा, मुहावरे, कहावत और सांस्कृतिक तत्व** शामिल होते हैं। लेखक अपनी राय अधिक व्यक्त कर सकता है। |

## C. मूल्यांकन (Evaluation / Marks)

| आयोग | मूल्यांकन मापदंड | विवरण |
|---|---|---|
| UPSC | विचार, तर्क, स्पष्टता, और समावेशिता | केवल विचारों की गहनता और तार्किकता को महत्व दिया जाता है। |
| BPSC | विचार, तर्क, साहित्यिक समावेशिता, भाषा और स्थानीय तत्व | निबंध की गुणवत्ता में भाषा, मुहावरे, लोक संस्कृति का प्रयोग भी अंक बढ़ाता है। |

## D. कठिनाई स्तर (Difficulty Level)

| आयोग | कठिनाई | विवरण |
|---|---|---|
| UPSC | उच्च | केवल तार्किक, दार्शनिक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पर आधारित। |
| BPSC | तुलनात्मक अधिक चुनौतीपूर्ण | तीसरे खंड में लोकोक्ति और मुहावरे आधारित निबंध होने के कारण, भाषा और सांस्कृतिक समझ भी जरूरी। |

## E. तैयारी में अंतर (Preparation Difference)

1. **UPSC:**
   - साहित्यिक और सांस्कृतिक उदाहरण कम जरूरी।
   - मुख्य फोकस: **विश्लेषण, तार्किकता, और बहुआयामी दृष्टिकोण**।
2. **BPSC:**
   - स्थानीय बोली, मुहावरे, कहावत और साहित्यिक उदाहरण पर ध्यान।
   - तीसरे खंड के लिए हिंदी भाषा में सांस्कृतिक और साहित्यिक समझ होना आवश्यक।
   - तैयारी में उदाहरण, रिपोर्ट, सूक्तियाँ और पूर्व वर्ष के प्रश्न पत्रों का अध्ययन आवश्यक।

# 4. निबंध और इसके प्रकार

## ➢ निबंध क्या है?

निबंध साहित्य की एक छोटी गद्यात्मक विधा (prose form) है, जिसका उद्देश्य किसी विषय पर विचार प्रस्तुत करना, दृष्टिकोण स्पष्ट करना और पाठक को लेखक के दृष्टिकोण से सहमत करना होता है। यह केवल तथ्य प्रस्तुत करने की विधा नहीं है, बल्कि इसमें लेखक की **रचनात्मक सोच**, **विश्लेषण क्षमता** और **भावनात्मक गहराई** भी सम्मिलित होती है।

आधुनिक साहित्य में निबंध को कला का रूप माना जाता है। यहाँ 'कला' से तात्पर्य उस प्रस्तुति और रचना-विन्यास से है, जिससे पाठक का ध्यान आकर्षित किया जा सके और उसे विषय के प्रति सोचने पर मजबूर किया जा सके। निबंध में लेखक की **बौद्धिक गहराई**, **व्यक्तित्व** और **भावनात्मक अभिव्यक्ति** का मिश्रण देखा जा सकता है।

## ➢ यह चुनौतीपूर्ण क्यों है?

निबंध लेखन को सबसे चुनौतीपूर्ण विधा इसलिए माना जाता है क्योंकि:

1. इसमें **कविता की लय** नहीं होती, **कहानी की घटनाएँ** नहीं होती, और **नाटक की प्रस्तुति** भी नहीं होती।
2. निबंध पूरी तरह **लेखक के विचारों पर निर्भर** होता है। इसमें विचारों की स्पष्टता, तार्किकता और बौद्धिक गहराई महत्वपूर्ण होती है।
3. पाठक का ध्यान बनाए रखना कठिन होता है क्योंकि इसमें **भावनाओं और तथ्यों का संतुलन** आवश्यक है।
4. यह विधा **अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता** देती है, लेकिन इसी स्वतंत्रता में लेखक को अपने विचारों की **समग्र रूपरेखा** बनाए रखना चुनौतीपूर्ण होता है।

निबंध लिखते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि:

- विचार स्पष्ट और तार्किक हों।
- उदाहरण और प्रमाण उपयुक्त हों।
- भाषा सरल, सटीक और आकर्षक हो।
- लेखक की **व्यक्तित्व झलक** और **समीक्षा क्षमता** पाठक को प्रभावित करे।

# 12. BPSC निबंध की तैयारी में Previous Year Papers का महत्व

बिहार लोक सेवा आयोग (BPSC) की मुख्य परीक्षा में निबंध (Essay) एक ऐसा खंड है जो अभ्यर्थी की विचार शक्ति, विश्लेषणात्मक दृष्टि, भाषा-प्रयोग, तार्किकता तथा प्रस्तुतीकरण शैली को परखता है।
यह केवल शब्दों का समुच्चय नहीं, बल्कि यह इस बात का प्रतिबिंब होता है कि अभ्यर्थी **कैसे सोचता है**, **कैसे अपने विचारों को तार्किक रूप देता है** और **कैसे अपनी बात को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करता है।**

ऐसे में पिछले वर्षों के प्रश्न पत्रों (Previous Year Question Papers) का अध्ययन और अभ्यास निबंध लेखन के लिए अत्यंत आवश्यक हो जाता है।
यह अभ्यर्थी को न केवल परीक्षा के पैटर्न से परिचित कराता है बल्कि यह भी सिखाता है कि किस प्रकार के विषय, विचार और उदाहरण अपेक्षित हैं।

## ➢ Previous Year Papers क्यों महत्वपूर्ण हैं?

### (1) परीक्षक की मानसिकता को समझना (Understanding Examiner's Perspective)

BPSC में प्रश्न तैयार करने वाली समिति पिछले वर्षों के विषयों और प्रवृत्तियों को ध्यान में रखती है। यह मानव स्वभाव है कि नए विचार अक्सर पुराने विषयों के आसपास ही घूमते हैं।
इसलिए पुराने प्रश्नों का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि आयोग किन प्रकार के विचारों, मुद्दों और सामाजिक दृष्टिकोणों को महत्व देती है।

- **उदाहरण:**
  68वीं, 69वीं और 70वीं BPSC मुख्य परीक्षा के प्रश्न देखें —
  हर वर्ष निबंधों में विकास, पर्यावरण, प्रौद्योगिकी, महिला सशक्तिकरण, अध्यात्म, भ्रष्टाचार और शिक्षा नीति जैसे विषयों की पुनरावृत्ति होती है।
  इससे स्पष्ट होता है कि आयोग उन मुद्दों पर निबंध अपेक्षित करती है जो समाज और शासन दोनों के लिए प्रासंगिक हों।

### (2) विचारों का पूर्वाभ्यास (Pre-Conceptual Practice)

पिछले प्रश्न पत्रों का अध्ययन अभ्यर्थी को यह समझने में मदद करता है कि किस प्रकार के विचार और तर्क प्रस्तुत करने चाहिए।
इससे विद्यार्थी को विषय पर सोचने की दिशा मिलती है, जैसे –

- विषय के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों पर विचार करना,
- उपयुक्त उदाहरण चुनना,
- और संतुलित निष्कर्ष प्रस्तुत करना।

- **उदाहरण:**
  यदि प्रश्न है — "देश का विकास और सूचना प्रौद्योगिकी",
  तो अभ्यर्थी को यह दिखाना चाहिए कि किस प्रकार तकनीकी प्रगति ने आर्थिक, सामाजिक और प्रशासनिक सुधारों को गति दी है, साथ ही इसके दुष्प्रभावों जैसे साइबर अपराध, बेरोजगारी आदि का भी विवेचन करना चाहिए।

### (3) लेखन शैली का सुधार (Improving Writing Style)

पिछले प्रश्नों पर अभ्यास करने से अभ्यर्थी अपनी भाषा की सटीकता, वाक्य विन्यास और विचारों की क्रमबद्धता को परिष्कृत कर सकता है।
निबंध का लेखन केवल विषय का ज्ञान नहीं, बल्कि उसे प्रस्तुत करने की कला भी है।

- **उदाहरण:**
  यदि विषय है – "पर्यावरण असंतुलन सृष्टि का विनाशक है",
  तो इसे केवल वैज्ञानिक तथ्य के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी लिखना चाहिए।
  यही लेखन शैली का परिपक्व स्वरूप कहलाता है।

### (4) समय प्रबंधन और परीक्षा रणनीति (Time Management and Strategy)

700–800 शब्दों में निबंध लिखना एक कला है। पुराने प्रश्नों पर अभ्यास करने से विद्यार्थी सीखता है कि सीमित शब्दों में विचारों को कैसे सटीक रूप से प्रस्तुत किया जाए।

- **रणनीति सुझाव:**
  - पहले 10 मिनट – विषय का चयन और रूपरेखा बनाना।
  - अगले 30 मिनट – मुख्य लेखन (प्रस्तावना, विवेचन, निष्कर्ष)।
  - अंतिम 5–10 मिनट – पुनर्परीक्षण और संशोधन।

इस रणनीति से न केवल गति बढ़ती है बल्कि लेखन में संतुलन भी आता है।

### (5) Previous Year Papers से मिलने वाले लाभ (Benefits of PYQs)

1. **विषय चयन की समझ** – कौन-से विषय बार-बार आते हैं, यह जानने से अध्ययन दिशा तय होती है।
2. **लेखन शैली का अभ्यास** – पुराने प्रश्नों के माध्यम से लिखने का आत्मविश्वास बढ़ता है।
3. **विचारों की विविधता** – एक ही उदाहरण को अलग-अलग संदर्भों में उपयोग करने की क्षमता विकसित होती है।
4. **समय प्रबंधन** – सीमित समय में गुणवत्ता के साथ लेखन का अभ्यास होता है।

- **उदाहरण:**
  "नई शिक्षा नीति 2023" और "कोविड के बाद बदलाव माँगती शिक्षा" दोनों विषय शिक्षा से जुड़े हैं, परंतु दृष्टिकोण अलग है। यह भिन्नता समझना PYQ अभ्यास से ही संभव है।


© www.examdhara.com

# खंड-1: अमूर्त निबंध

## 1. समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की महत्ता (70वीं BPSC)

आज के वैश्विक परिदृश्य में भारत एक उभरती हुई महाशक्ति के रूप में स्थापित हो रहा है। जिस प्रकार एक समय विश्व में औद्योगिक क्रांति ने नए शक्ति केंद्र बनाए थे, उसी प्रकार 21वीं सदी में भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ वैश्विक संतुलन को नए सिरे से परिभाषित कर रही हैं। भारत की बढ़ती जनसंख्या, सशक्त लोकतंत्र, आर्थिक प्रगति, तकनीकी नवाचार और सांस्कृतिक धरोहर ने उसे विश्व समुदाय में एक अनिवार्य भूमिका प्रदान की है।

भारत की भू-राजनीतिक स्थिति उसकी महत्ता को और अधिक बढ़ा देती है। एशिया के हृदय में स्थित भारत, दक्षिण एशिया के देशों के लिए न केवल एक आर्थिक साझेदार है, बल्कि रणनीतिक दृष्टि से भी एक स्थिर शक्ति के रूप में देखा जाता है। हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की बढ़ती उपस्थिति, 'इंडो-पैसिफिक' रणनीति में उसकी सक्रिय भागीदारी और क्षेत्रीय सहयोग संगठन जैसे सार्क, बिम्सटेक तथा शंघाई सहयोग संगठन में उसकी भूमिका उसे एक निर्णायक खिलाड़ी बनाती है।

आर्थिक दृष्टि से देखें तो भारत विश्व की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन चुका है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं ने भी भारत की विकास दर को सराहा है। भारत का स्टार्टअप ईकोसिस्टम, डिजिटल इंडिया अभियान, मेक इन इंडिया पहल तथा वैश्विक निवेशकों के लिए आकर्षक वातावरण उसे विश्व अर्थव्यवस्था का एक प्रमुख इंजन बना रहे हैं। आज गूगल, माइक्रोसॉफ्ट, अमेजन जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के शीर्ष पदों पर भारतीय मूल के अधिकारी कार्यरत हैं, जो भारत की वैश्विक क्षमता का परिचायक है।

तकनीकी क्षेत्र में भारत की भूमिका भी उल्लेखनीय है। सूचना प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष अनुसंधान, फार्मास्यूटिकल्स और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के क्षेत्र में भारत ने अद्वितीय उपलब्धियाँ हासिल की हैं। इसरो द्वारा किए गए चंद्रयान और मंगलयान अभियानों ने विश्वभर में भारत की वैज्ञानिक क्षमता का लोहा मनवाया है। कोविड-19 महामारी के दौरान भारत ने "वैक्सीन मैत्री" कार्यक्रम के तहत अनेक देशों को वैक्सीन उपलब्ध कराकर 'विश्व गुरु' की अपनी परंपरागत भूमिका को पुनः सशक्त किया।

सांस्कृतिक दृष्टि से भी भारत का प्रभाव व्यापक है। योग, आयुर्वेद, भारतीय खानपान, हिंदी भाषा और बॉलीवुड जैसी सॉफ्ट पावर न केवल एशिया, बल्कि यूरोप, अमेरिका और अफ्रीका तक भारतीय संस्कृति को लोकप्रिय बना रहे हैं। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस का संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंगीकार किया जाना भारत के सांस्कृतिक प्रभाव का जीवंत उदाहरण है। भारत की 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (संपूर्ण विश्व एक परिवार है) की भावना आज वैश्विक मंचों पर शांति और समरसता का संदेश देती है।

राजनीतिक स्तर पर भारत की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती जा रही है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता के लिए भारत की दावेदारी को विश्व के अनेक देशों का समर्थन प्राप्त है। भारत जी-20 जैसे वैश्विक मंचों पर भी अपनी सक्रियता बढ़ा रहा है। हाल ही में भारत ने जी-20 की अध्यक्षता संभालकर वैश्विक विकास और समावेशी वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण नीतिगत पहल की हैं। साथ ही, जलवायु परिवर्तन जैसे वैश्विक मुद्दों पर भी भारत ने "वन अर्थ, वन फैमिली, वन फ्यूचर" जैसे दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं।

भारत की विदेश नीति में "बहुपक्षीयता" और "स्ट्रैटेजिक ऑटोनॉमी" की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। रूस-यूक्रेन युद्ध, अमेरिका-चीन व्यापार युद्ध जैसी जटिल अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों में भी भारत ने संतुलित और स्वतंत्र नीति अपनाई है। 'क्वाड' (QUAD) समूह में अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के साथ साझेदारी हो या ब्रिक्स (BRICS) देशों के साथ आर्थिक सहयोग, भारत हर मंच पर अपनी उपस्थिति प्रभावी बना रहा है।

भारत की युवा जनसंख्या भी उसकी वैश्विक महत्ता में योगदान कर रही है। जहाँ विकसित देश वृद्धावस्था की ओर बढ़ रहे हैं, वहीं भारत में लगभग 65% जनसंख्या 35 वर्ष से कम आयु की है। यह 'जनसांख्यिकीय लाभांश' भारत को भविष्य में विश्व के लिए ज्ञान, श्रम और नवाचार का केंद्र बना सकता है। इसके साथ ही, शिक्षा, स्वास्थ्य और कौशल विकास पर भारत का बढ़ता हुआ ध्यान उसकी भविष्य की वैश्विक भूमिका को और सशक्त करेगा।

हालाँकि, चुनौतियाँ भी कम नहीं हैं। गरीबी, असमानता, पर्यावरणीय संकट, सामाजिक संघर्ष जैसे मुद्दे भारत की आंतरिक मजबूती को प्रभावित कर सकते हैं। लेकिन इन समस्याओं के समाधान के लिए भारत द्वारा उठाए गए कदम, जैसे सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) को अपनाना, नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश बढ़ाना और डिजिटल समावेशन की दिशा में कार्य करना, यह दिखाते हैं कि भारत न केवल अपनी समस्याओं को पहचानता है, बल्कि उनका समाधान भी खोज रहा है।

भारत के इस बढ़ते वैश्विक प्रभाव को प्रसिद्ध विचारक डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के शब्दों में समझा जा सकता है:

"भारत एक विकसित राष्ट्र बन सकता है यदि हम अपनी क्षमताओं पर विश्वास करें और उन्हें सही दिशा में प्रयुक्त करें।"

आज भारत उसी दिशा में आगे बढ़ रहा है। अपनी ऐतिहासिक विरासत और आधुनिक दृष्टिकोण के संतुलन के साथ भारत वैश्विक मंच पर न केवल अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है, बल्कि नीतियों और सिद्धांतों के माध्यम से विश्व को दिशा भी दे रहा है।

इसलिए, समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की महत्ता दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। आने वाले वर्षों में भारत न केवल एक आर्थिक या सैन्य शक्ति के रूप में, बल्कि नैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक शक्ति के रूप में भी विश्व पटल पर अपनी पहचान और मजबूत करेगा।

## 2. देश का विकास और सूचना प्रौद्योगिकी (70वीं BPSC)

आज के युग को यदि सूचना प्रौद्योगिकी (Information Technology) का युग कहा जाए, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। सूचना प्रौद्योगिकी ने जिस तरह से मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है, वह अद्वितीय है। विशेषकर विकासशील देशों के लिए सूचना प्रौद्योगिकी एक वरदान के समान है, जिसने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए हैं। भारत जैसे विशाल देश में, जहाँ विविधताएँ, चुनौतियाँ और संभावनाएँ समान रूप से विद्यमान हैं, सूचना प्रौद्योगिकी ने देश के विकास को एक नई दिशा और गति प्रदान की है।

भारत में सूचना प्रौद्योगिकी का इतिहास स्वतंत्रता के बाद के दशक से प्रारंभ होता है, लेकिन वास्तविक प्रगति 1990 के दशक में उदारीकरण की नीति के बाद देखने को मिली। इंटरनेट, कंप्यूटर, मोबाइल फोन और अन्य डिजिटल साधनों के प्रसार ने भारत को वैश्विक मंच पर एक महत्वपूर्ण स्थान दिलाया। विशेषकर 21वीं सदी में भारत को "आईटी महाशक्ति" (IT Superpower) के रूप में पहचान मिली है। बैंगलोर, हैदराबाद, पुणे जैसे शहर सूचना प्रौद्योगिकी के हब बन गए हैं, जहाँ से दुनिया भर की कंपनियों को सेवाएँ प्रदान की जा रही हैं।

"ज्ञान ही शक्ति है।" — यह कहावत सूचना प्रौद्योगिकी के युग में पूर्णतः सत्य सिद्ध होती है, क्योंकि आज ज्ञान और सूचना तक त्वरित पहुँच ही विकास का सबसे बड़ा आधार बन चुकी है।

सूचना प्रौद्योगिकी ने देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इससे रोजगार के नए अवसर उत्पन्न हुए हैं। लाखों युवाओं को सॉफ्टवेयर डेवलपमेंट, डेटा एनालिसिस, क्लाउड कंप्यूटिंग, साइबर सिक्योरिटी और डिजिटल मार्केटिंग जैसे क्षेत्रों में रोजगार मिला है। "स्टार्टअप इंडिया" और "डिजिटल इंडिया" जैसी सरकारी पहल ने भी सूचना प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देकर उद्यमिता को प्रोत्साहित किया है। आज भारत में हजारों स्टार्टअप्स तकनीक के माध्यम से न केवल स्थानीय समस्याओं का समाधान कर रहे हैं, बल्कि वैश्विक बाजारों में भी प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में भी सूचना प्रौद्योगिकी ने क्रांतिकारी बदलाव किए हैं। ऑनलाइन शिक्षा, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म, डिजिटल लाइब्रेरी और वर्चुअल क्लासरूम जैसी सुविधाओं ने ज्ञान की पहुँच को सुलभ और व्यापक बनाया है। ग्रामीण क्षेत्रों के बच्चे भी अब उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा तक पहुँच प्राप्त कर रहे हैं। कोविड-19 महामारी के दौरान ऑनलाइन शिक्षा ने शिक्षा प्रणाली को गतिशील बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इसी प्रकार, स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में भी टेलीमेडिसिन, ई-हेल्थ रिकॉर्ड और स्वास्थ्य ऐप्स ने चिकित्सा सेवाओं को सुगम और सुलभ बना दिया है।

सरकारी सेवाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ाने में भी सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। आज अधिकांश सरकारी सेवाएँ डिजिटल माध्यम से उपलब्ध हैं। आधार कार्ड, डिजिलॉकर, भीम एप, उमंग एप जैसी पहल ने आम जनता को

सुविधाएँ प्रदान करने में बड़ी मदद की है। कर भुगतान, पेंशन वितरण, राशन वितरण जैसे कार्यों में भी पारदर्शिता आई है, जिससे भ्रष्टाचार में कमी आई है और सेवा वितरण में तेजी आई है।

राजनीति और शासन में भी सूचना प्रौद्योगिकी का व्यापक प्रभाव पड़ा है। चुनाव प्रक्रिया में इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) और मतदाता पहचान पत्र के डिजिटल रिकॉर्ड ने पारदर्शिता बढ़ाई है। साथ ही, सोशल मीडिया के माध्यम से जनता और सरकार के बीच सीधा संवाद स्थापित हुआ है। जन शिकायत निवारण पोर्टल, ऑनलाइन जनसुनवाई और सोशल मीडिया पर सक्रिय सरकारी अधिकारी अब जनता की समस्याओं को शीघ्र सुन और सुलझा रहे हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी ने सामाजिक सशक्तिकरण में भी अहम भूमिका निभाई है। इंटरनेट के माध्यम से महिलाएँ, अल्पसंख्यक समुदाय और वंचित वर्ग अपनी आवाज़ बुलंद कर रहे हैं। ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने उन्हें न केवल ज्ञान और सूचना प्राप्त करने का अवसर दिया है, बल्कि स्वरोजगार और उद्यमिता के नए रास्ते भी खोले हैं। डिजिटल साक्षरता मिशन जैसे कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीकी साक्षरता बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे देश का समग्र विकास संभव हो रहा है।

"तकनीक एक साधन है, विकास एक लक्ष्य है।" — जब हम सूचना प्रौद्योगिकी का सही और समावेशी उपयोग करते हैं, तब यह साधन राष्ट्र को विकास की ऊँचाइयों तक ले जाता है।

हालांकि, सूचना प्रौद्योगिकी के साथ कुछ चुनौतियाँ भी जुड़ी हुई हैं। साइबर अपराध, डेटा चोरी, ऑनलाइन ठगी जैसी समस्याएँ तेजी से बढ़ रही हैं। इसके अलावा, डिजिटल डिवाइड यानी शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच तकनीकी पहुँच का अंतर भी एक बड़ी समस्या है। सरकार और समाज को मिलकर यह प्रयास करना होगा कि तकनीक का लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे।

सूचना प्रौद्योगिकी के सकारात्मक प्रभावों को देखते हुए सरकार ने "डिजिटल इंडिया" मिशन के तहत देश के हर गाँव और शहर को इंटरनेट से जोड़ने का संकल्प लिया है। ई-गवर्नेंस, स्मार्ट सिटी परियोजनाएँ, डिजिटल भुगतान प्रणाली, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, ब्लॉकचेन तकनीक आदि भविष्य के विकास को गति देने वाले क्षेत्र हैं। आने वाले समय में 5G तकनीक, इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT), मशीन लर्निंग और बिग डेटा एनालिटिक्स जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग करके भारत एक विकसित राष्ट्र बनने की दिशा में तेज गति से आगे बढ़ सकता है।

महात्मा गांधी ने कहा था, "भारत का भविष्य उसके गाँवों में बसता है।" आज के डिजिटल युग में यदि हम सूचना प्रौद्योगिकी को गाँवों तक पहुँचा सकें, तो निश्चित ही संपूर्ण देश का विकास संभव हो सकेगा।

अंततः कहा जा सकता है कि सूचना प्रौद्योगिकी ने भारत को एक नई उड़ान दी है। यह केवल तकनीकी विकास का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक बदलाव और आर्थिक उन्नति का माध्यम भी है। यदि इसे सही दिशा और उद्देश्य के साथ अपनाया जाए, तो सूचना प्रौद्योगिकी भारत को विश्वगुरु बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। देश का विकास अब सूचना प्रौद्योगिकी के कुशल, सुरक्षित और समावेशी उपयोग पर निर्भर है। यही भविष्य का मार्ग है।

## 3. पर्यावरण असन्तुलन सृष्टि का विनाशक है (70वीं BPSC)

एक समय की बात है, एक छोटे से गांव में प्रकृति के साथ तालमेल में जीते हुए लोग सुख-शांति का जीवन व्यतीत करते थे। हरियाली, स्वच्छ जल, शुद्ध वायु और विविध प्रकार के जीव-जंतु उनके जीवन का अभिन्न हिस्सा थे। लेकिन जैसे-जैसे समय बदला, मनुष्य की बढ़ती लालच ने इस प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ दिया। धीरे-धीरे गांव का हरियाली खत्म होने लगी, जल स्रोत सूखने लगे और पशु-पक्षी पलायन करने लगे। आज वही गांव वीरान पड़ा है, और यह कहानी पूरे विश्व का सच बनती जा रही है।

प्रसिद्ध पर्यावरणविद् सुंदरलाल बहुगुणा ने कहा है –
**"प्रकृति को नष्ट करना, अपने भविष्य को नष्ट करना है।"**

पर्यावरण वह आधार है जिस पर सम्पूर्ण सृष्टि टिकी हुई है। जल, वायु, भूमि, अग्नि और आकाश – ये पांच तत्व मिलकर जीवन का निर्माण करते हैं। जब इनमें संतुलन बना रहता है, तब पृथ्वी पर जीवन संभव होता है। किंतु जब इन तत्वों का संतुलन बिगड़ता है, तो उसका सीधा प्रभाव समस्त जीव-जगत पर पड़ता है। आज जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, वनों की कटाई, जैव विविधता का विनाश जैसे संकट इस असंतुलन के भयावह परिणाम हैं।

# खंड-2: मूर्त निबंध

## 13. राजनीतिक इच्छाशक्ति और देश की सुरक्षा (70वीं BPSC)

किसी भी राष्ट्र की स्थिरता, प्रगति और समृद्धि का मूल आधार उसकी सुरक्षा व्यवस्था होती है। सुरक्षा केवल सीमाओं की रक्षा तक सीमित नहीं होती, बल्कि आंतरिक शांति, आर्थिक मजबूती, तकनीकी विकास, सामाजिक सौहार्द और सांस्कृतिक अखंडता का भी समावेश करती है। इन सभी पहलुओं को सशक्त और सुरक्षित रखने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति का होना अत्यंत आवश्यक है। राजनीतिक इच्छाशक्ति वह मानसिक दृढ़ता और साहस है, जो नेतृत्व को कठिन से कठिन निर्णय लेने के लिए प्रेरित करती है, चाहे परिस्थितियाँ कैसी भी हों।

राजनीतिक इच्छाशक्ति का अर्थ है– देशहित में बिना किसी दबाव या निजी स्वार्थ के निर्णायक कदम उठाना। जब नेतृत्व में यह गुण होता है, तभी राष्ट्र कठिन चुनौतियों का सामना कर पाता है और सुरक्षा के क्षेत्र में ठोस उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकता है। यदि राजनीतिक नेतृत्व संकोच या असमंजस में रहता है, तो सुरक्षा तंत्र भी कमजोर पड़ता है और राष्ट्र विविध आंतरिक एवं बाह्य खतरों का शिकार बन सकता है।

देश की सुरक्षा बहुआयामी होती है। बाहरी सुरक्षा के लिए सैनिक बल, रक्षा तकनीक और कूटनीति की आवश्यकता होती है, जबकि आंतरिक सुरक्षा के लिए कानून व्यवस्था, सामाजिक एकता, भ्रष्टाचार नियंत्रण और आर्थिक मजबूती जरूरी है। इन सभी मोर्चों पर सफलता तभी संभव है जब राजनीतिक नेतृत्व दृढ़ निश्चयी हो। उदाहरण के लिए, जब देश पर आतंकवाद, अलगाववाद या विदेशी आक्रमण का संकट आता है, तब केवल सैनिक ताकत पर्याप्त नहीं होती, बल्कि त्वरित और प्रभावशाली राजनीतिक निर्णय भी आवश्यक होते हैं।

भारत के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जहाँ राजनीतिक इच्छाशक्ति ने देश की सुरक्षा को नई दिशा दी। 1971 के भारत-पाक युद्ध के समय प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने जिस तरह की निर्णायक भूमिका निभाई, वह आज भी राजनीतिक इच्छाशक्ति का उदाहरण मानी जाती है। बांग्लादेश के निर्माण में उनकी सक्रियता और साहस ने भारत की सुरक्षा स्थिति को भी मजबूत किया। इसी प्रकार, कारगिल युद्ध के समय तत्कालीन नेतृत्व ने सेना को पूर्ण स्वतंत्रता और समर्थन प्रदान किया, जिससे भारत ने विजय प्राप्त की।

आधुनिक समय में भी जब साइबर हमले, अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद, जैविक युद्ध जैसे नए खतरे सामने आ रहे हैं, तब राजनीतिक इच्छाशक्ति और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। अब युद्ध का स्वरूप बदल गया है। सीमाओं पर टैंक और तोप के मुकाबले डिजिटल नेटवर्क, वित्तीय तंत्र और सूचनाओं की लड़ाई अधिक घातक सिद्ध हो रही है। इन खतरों से निपटने के लिए ठोस रणनीति, तत्पर निर्णय और दृढ़ इच्छाशक्ति की अत्यधिक आवश्यकता है। यदि राजनीतिक नेतृत्व समय पर आवश्यक कदम उठाए, तो इन खतरों को प्रभावी ढंग से निष्फल किया जा सकता है।

राजनीतिक इच्छाशक्ति का प्रभाव केवल रक्षा नीतियों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि रक्षा उत्पादन, अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देने में भी नजर आता है। 'मेक इन इंडिया' जैसी पहल और स्वदेशी रक्षा उपकरणों के निर्माण में तेजी लाने के निर्णय, राजनीतिक इच्छाशक्ति के उदाहरण हैं। यदि कोई राष्ट्र अपनी रक्षा सामग्री के लिए पूरी तरह विदेशी स्रोतों पर निर्भर रहता है, तो उसकी सुरक्षा सदैव खतरे में रहती है। आत्मनिर्भरता के लिए मजबूत राजनीतिक संकल्प की आवश्यकता होती है।

इसके साथ ही आंतरिक सुरक्षा के क्षेत्र में भी राजनीतिक इच्छाशक्ति अत्यंत आवश्यक है। आतंकवाद, नक्सलवाद, सांप्रदायिकता, और भ्रष्टाचार जैसे आंतरिक संकटों से निपटने के लिए कठोर निर्णय लेने पड़ते हैं। यदि नेतृत्व कमजोर होगा या किसी दबाव में आकर निर्णय लेगा, तो देश की आंतरिक स्थिति अस्थिर हो सकती है।

साथ ही, जनता का विश्वास भी तभी बना रहता है जब नेतृत्व में दृढ़ता और पारदर्शिता होती है। राजनीतिक इच्छाशक्ति का एक पहलू यह भी है कि वह निर्णय लेने में जनता के हित को सर्वोपरि रखे, न कि केवल तात्कालिक लोकप्रियता को। जब जनता यह महसूस करती है कि उसके नेता राष्ट्रीय सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दे रहे हैं, तो वह स्वयं भी राष्ट्रहित में योगदान करने को प्रेरित होती है।

महात्मा गांधी ने कहा था–

*"You may never know what results come from your actions. But if you do nothing, there will be no result."*

(तुम्हें यह कभी पता नहीं चलेगा कि तुम्हारे कार्यों का क्या परिणाम निकलेगा, लेकिन यदि तुम कुछ नहीं करोगे तो कोई परिणाम नहीं निकलेगा।)

यह कथन राजनीतिक इच्छाशक्ति के महत्व को प्रतिपादित करता है। कोई भी पहल तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक नेतृत्व में साहसिक कदम उठाने की दृढ़ता न हो।

वैश्विक परिदृश्य में भी हम देखते हैं कि जिन देशों का नेतृत्व दृढ़ इच्छाशक्ति रखता है, वे वैश्विक शक्तियों के बीच अपना सम्मानजनक स्थान बना पाते हैं। अमेरिका, रूस, चीन जैसे देशों ने समय-समय पर अपनी राजनीतिक इच्छाशक्ति का परिचय देकर अपनी सुरक्षा और प्रभुता को कायम रखा है। भारत भी अब इस दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है, और उसका कद वैश्विक मंच पर निरंतर बढ़ रहा है।

अंततः, यह निष्कर्ष निकलता है कि देश की सुरक्षा केवल रक्षा बलों की ताकत पर निर्भर नहीं करती, बल्कि यह राजनीतिक नेतृत्व की इच्छाशक्ति पर भी उतनी ही निर्भर है। दृढ़ संकल्प, स्पष्ट दृष्टि, साहसिक निर्णय और राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखने वाली राजनीतिक इच्छाशक्ति ही देश को भीतर और बाहर से सुरक्षित कर सकती है। इसीलिए, समय की मांग है कि हमारे राजनीतिक नेतृत्व में यह गुण सदैव बना रहे, ताकि भारत एक सशक्त, सुरक्षित और आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में विश्व पटल पर अपना स्थान और मजबूत कर सके।

## 14. भ्रष्टाचार का अन्त और देश का उत्थान (70वीं BPSC)

भ्रष्टाचार एक ऐसी समस्या है जो किसी भी देश की प्रगति, समृद्धि और सामाजिक न्याय की राह में सबसे बड़ी बाधा बनकर खड़ी रहती है। यह समाज के हर वर्ग को प्रभावित करता है और लोकतंत्र की नींव को कमजोर करता है। भ्रष्टाचार का न केवल आर्थिक, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक स्तर पर भी घातक प्रभाव पड़ता है। इस समस्या का समाधान करना, राष्ट्र की प्रगति और विकास के लिए आवश्यक है। अगर हम भ्रष्टाचार का अन्त करना चाहते हैं तो हमें इसकी जड़ तक पहुंचने और इस पर सख्त नियंत्रण लगाने की आवश्यकता है।

भ्रष्टाचार का प्रभाव न केवल सरकार की कार्यशैली पर पड़ता है, बल्कि यह जनता के जीवन स्तर को भी प्रभावित करता है। सरकारी योजनाओं में भ्रष्टाचार के कारण जिन योजनाओं का उद्देश्य समाज के पिछड़े वर्गों की मदद करना होता है, वे योजनाएं केवल अधिकारियों और नेताओं के हाथों में जाती हैं, और इसका लाभ आम जनता तक नहीं पहुँचता। इससे सरकारी धन का दुरुपयोग होता है और जनता का विश्वास सरकार पर से उठने लगता है। शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़क निर्माण और अन्य विकास कार्यों में भ्रष्टाचार के कारण देश का विकास रुक जाता है।

आर्थिक दृष्टिकोण से देखें तो भ्रष्टाचार से देश की अर्थव्यवस्था कमजोर होती है। निवेशक और उद्योगपति उन देशों में निवेश करने से कतराते हैं, जहाँ भ्रष्टाचार उच्चतम स्तर पर होता है। इसके कारण आर्थिक संसाधनों का अत्यधिक अपव्यय होता है और देश का विकास प्रभावित होता है।

भ्रष्टाचार का सामाजिक असर भी गहरा होता है। यह समाज में असमानता और भेदभाव को बढ़ावा देता है। जो लोग ताकतवर होते हैं या जिनके पास धन है, वे आसानी से सरकारी कामकाज में अपनी सुविधा के अनुसार बदलाव करवा सकते हैं, जबकि साधारण नागरिकों को यह अवसर नहीं मिल पाता। इस प्रकार, समाज में धन और ताकत के आधार पर असमानताएँ उत्पन्न होती हैं, जो समाज में विरोधाभास और तनाव का कारण बनती हैं।

प्रसिद्ध कवि और चिंतक आचार्य चतुरसेन ने कहा था, "भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ा नहीं, तो यह समाज और राष्ट्र को धीरे-धीरे नष्ट कर देगा।" यह विचार इस बात को स्पष्ट करता है कि भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए एक संगठित और दृढ़ प्रयास आवश्यक है।

भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में हमें कई रणनीतियों को अपनाने की आवश्यकता है। सबसे पहले, हमें सरकारी तंत्र में पारदर्शिता लानी होगी। यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी सरकारी कार्य और योजनाएँ पूरी पारदर्शिता से लागू हों। इसके लिए सूचना का अधिकार (RTI) जैसे कानूनी प्रावधानों को मजबूत किया जाना चाहिए ताकि नागरिक अपनी सरकार से सवाल पूछ सकें और जवाब प्राप्त कर सकें।

इसके साथ ही, सरकारी अधिकारियों और नेताओं के खिलाफ सख्त कानून और दंडात्मक कार्रवाई की व्यवस्था करनी चाहिए। अगर कोई व्यक्ति भ्रष्टाचार में लिप्त पाया जाता है, तो उसे सजा मिलनी चाहिए, और यह सजा इतनी कड़ी होनी चाहिए कि वह दूसरों के लिए एक चेतावनी बने।

आवश्यक है कि शिक्षा और जन जागरूकता अभियान चलाए जाएं, ताकि लोग समझ सकें कि भ्रष्टाचार समाज के लिए कितना हानिकारक है। जब समाज के लोग इस कुप्रथा के खिलाफ जागरूक होंगे, तो उनके द्वारा किया गया दबाव सरकारी तंत्र में सुधार लाने में सहायक होगा।

इसके अलावा, डिजिटलाइजेशन और टेक्नोलॉजी का इस्तेमाल भी भ्रष्टाचार को समाप्त करने में सहायक हो सकता है। यदि सरकारी कार्यों का अधिकतम हिस्सा ऑनलाइन किया जाए, तो इसे पारदर्शी और नियंत्रित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, अगर सरकारी योजनाओं का लाभ सीधे जनता को दिया जाए और बिचौलियों को हटाया जाए, तो भ्रष्टाचार के रास्ते में रुकावट आएगी।

जब हम भ्रष्टाचार को समाप्त करने की बात करते हैं, तो इसका उद्देश्य केवल कानून और व्यवस्था के सुधार तक सीमित नहीं होना चाहिए। बल्कि, यह एक व्यापक सामाजिक आंदोलन होना चाहिए, जो देश के हर नागरिक को भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई में शामिल करे। जब देश का नागरिक भ्रष्टाचार के खिलाफ खड़ा होता है और इस बुराई को नकारता है, तो सरकार को अपने कार्यों में सुधार लाने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

भ्रष्टाचार के समाप्त होने पर, सरकारी योजनाएं सही दिशा में लागू होंगी और इसका लाभ आम नागरिकों को मिलेगा। इससे शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग, और अन्य विकास कार्यों में तेजी आएगी, और देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होगी। इसके अलावा, जब सरकारी कामकाज में पारदर्शिता आएगी, तो जनता का सरकार पर विश्वास बढ़ेगा, और इससे लोकतंत्र और मजबूत होगा।

भ्रष्टाचार के खत्म होने से समाज में समानता और न्याय का वातावरण बनेगा। सभी नागरिकों को समान अवसर मिलेंगे और समाज में भेदभाव और असमानता कम होगी। इससे सामाजिक सद्भाव और भाईचारे को बढ़ावा मिलेगा।

अंततः, यह कहा जा सकता है कि भ्रष्टाचार का अन्त करना और देश का उत्थान एक साथ जुड़े हुए हैं। भ्रष्टाचार की समाप्ति से न केवल आर्थिक, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक सुधार भी संभव होंगे। इस दिशा में हम सभी को मिलकर प्रयास करना होगा। सरकार, नागरिक, और समाज के हर वर्ग को इस कुप्रथा के खिलाफ जागरूक और सक्रिय रूप से काम करना होगा। यदि हम सभी मिलकर भ्रष्टाचार के खिलाफ काम करते हैं, तो एक दिन यह समस्या समाप्त हो सकती है, और हमारा देश एक समृद्ध और प्रगति की ओर अग्रसर हो सकता है।

यह कहा जा सकता है कि अगर भ्रष्टाचार का अन्त हो जाए, तो देश का उत्थान निश्चित रूप से संभव है।

## 15. शिथिल कानून और व्यवस्था नारी सशक्तीकरण की बाधा (70वीं BPSC)

शिथिल कानून और व्यवस्था नारी सशक्तीकरण की एक बड़ी बाधा है। समाज में महिलाओं की स्थिति सुधारने और उन्हें उनके अधिकार देने के लिए कई प्रयास किए गए हैं, लेकिन जब तक कानून और व्यवस्था मजबूत और प्रभावी नहीं होगी, तब तक नारी सशक्तीकरण संभव नहीं है। शिथिल कानूनों, कमजोर कानूनी व्यवस्था, और कानून की लापरवाही के कारण महिलाओं के खिलाफ होने वाले अपराधों और भेदभाव में वृद्धि होती है, जिससे उनका सशक्तीकरण प्रभावित होता है।

हमारे समाज में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए कई कानून हैं, जैसे घरेलू हिंसा रोकथाम अधिनियम, बलात्कार, दहेज उत्पीड़न, और महिला सुरक्षा से संबंधित अन्य कई कानून। लेकिन इन कानूनों का सही तरीके से पालन और प्रभावी क्रियान्वयन नहीं होता। जब कानून ठीक से लागू नहीं होते हैं, तो अपराधियों को सजा नहीं मिलती और महिलाओं का विश्वास कानून व्यवस्था में कम हो जाता है। यही शिथिलता उनके अधिकारों की रक्षा की प्रक्रिया को रोकती है और उन्हें अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने में कठिनाइयाँ पैदा करती है।

वर्तमान समय में महिलाओं के खिलाफ बढ़ते अपराध, जैसे बलात्कार, यौन उत्पीड़न, घरेलू हिंसा, और दहेज उत्पीड़न, इस बात का संकेत हैं कि हमारी कानून व्यवस्था कमजोर है। अपराधियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई नहीं होने के कारण, अपराध बढ़ते जा रहे हैं। कई बार पुलिस और न्यायपालिका द्वारा सही समय पर कार्रवाई नहीं की जाती, जिससे अपराधी छूट जाते हैं। महिलाओं को अपनी

# खंड-3: स्थानीय लोकोक्ति पर आधारित निबंध

## 25. बनले के साथी सब केहू ह अउरी बिगड़ले के केहु नाहीं (70वीं BPSC)

किसी गांव में एक साधु बाबा आए। उनके पास एक तोता था जो सुंदर और चंचल था। बाबा जहाँ भी जाते, वह तोता लोगों को आकर्षित कर लेता। धीरे-धीरे गाँव के बड़े-बड़े लोग बाबा के आस-पास मंडराने लगे। सब उन्हें खाने का न्योता देने लगे, वस्त्र भेंट करने लगे, आदर-सत्कार में जुट गए। साधु बाबा मुस्कुराते और आशीर्वाद देते। एक दिन अचानक वह तोता उड़ गया। अब साधु बाबा वही के वही थे, परन्तु उनके आस-पास का सारा सम्मान, आतिथ्य और भीड़ छूमंतर हो गई। बाबा ने मुस्कुराते हुए कहा, "जब तक चमक थी, सब साथ थे, अब असली मैं रह गया हूँ, तो कोई नहीं।"

यह कहानी हमारे समाज की कटु सच्चाई को उजागर करती है। जब तक व्यक्ति सफलता, पद-प्रतिष्ठा, संपत्ति या रूप के बल पर चमकता है, तब तक सब उसके साथ होते हैं। परन्तु जैसे ही परिस्थितियाँ बदलती हैं, सफलता का सूरज ढलता है, दुनिया का चेहरा भी बदल जाता है। इसी भावना को हमारे लोकजीवन में 'बनले के साथी सब केहू ह अउरी बिगड़ले के केहु नाहीं' कहावत में बड़ी सुंदरता से कहा गया है। यानी जब तक सब कुछ अच्छा चलता है, तब तक लोग साथ निभाते हैं, पर जब बुरा समय आता है, तो साथ छोड़ देते हैं।

मनुष्य स्वभाव से ही स्वार्थी होता है। वह उन्हीं के साथ रहना पसंद करता है जिनसे उसे कुछ लाभ या सुविधा प्राप्त होती है। जब किसी के पास वैभव, यश, या शक्ति होती है, तो लोग उसकी प्रशंसा करते हैं, उसके आगे-पीछे घूमते हैं। पर जब वही व्यक्ति संकट में पड़ता है, दरिद्र हो जाता है या अपना प्रभाव खो देता है, तब वही लोग उससे मुँह मोड़ लेते हैं। यह संसार का अटल सत्य है जिसे प्रत्येक व्यक्ति किसी-न-किसी मोड़ पर अनुभव करता है।

समाज में इसके अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। कोई व्यापारी जब धनवान होता है, तो उसके घर मेहमानों का ताँता लगा रहता है। बड़े-बड़े लोग उससे दोस्ती करना चाहते हैं। परन्तु जब व्यापार में घाटा होता है, दिवाला निकलता है, तो वही लोग उसे पहचानने से भी इनकार कर देते हैं। फिल्मी दुनिया में भी अनेक कलाकारों के जीवन में यह देखा गया है। जब वे लोकप्रिय रहते हैं, तो चारों ओर चमक-दमक रहती है। लेकिन जैसे ही उनकी प्रसिद्धि का सूर्य अस्त होता है, वे अकेले पड़ जाते हैं।

महापुरुषों ने भी इस सत्य को पहचाना और इसकी ओर संकेत किया है। तुलसीदास जी ने लिखा है—

*"सज कुलिन गुन ग्यान रतन धनु, जो नाहिं दरिद्र के मीत।"*

अर्थात सज्जन, कुलीन, गुणी, विद्वान और धनी लोग भी दरिद्र व्यक्ति के मित्र नहीं बनते। यह कटु सच्चाई है कि दुनिया सफलता की पूजा करती है और विफलता से मुँह मोड़ लेती है।

मनुष्य का स्वभाव अवसरवादी हो गया है। वह उसी समय साथ देता है जब उसे अपनी भलाई दिखती है। जब संकट आता है, तब वह किनारा कर लेता है। मित्रता, संबंध और प्रेम सब आजकल स्वार्थ की बुनियाद पर टिके हुए दिखाई देते हैं। रिश्ते भी तब तक निभाए जाते हैं जब तक उनमें लाभ की उम्मीद होती है। जैसे ही कोई आर्थिक, सामाजिक या व्यक्तिगत संकट आता है, लोग दूर हो जाते हैं।

"बनले के साथी सब केहू ह" का अर्थ है कि जब सब कुछ अच्छा चलता है, तब लोग अपनेपन का दिखावा करते हैं। वे मिठास भरी बातें करते हैं, साथ चलते हैं, मदद करते हैं। परन्तु "बिगड़ले के केहु नाहीं" का तात्पर्य है कि जब हालत बिगड़ जाती है, दुख-दर्द आता है, तो वही लोग मुंह फेर लेते हैं।

कभी-कभी यह अनुभव भी जीवन का बड़ा शिक्षक बन जाता है। जब सब कुछ छिन जाता है, तब व्यक्ति असली और नकली संबंधों की पहचान कर पाता है। कठिनाइयाँ रिश्तों की असली परीक्षा होती हैं। जो लोग दुःख के समय साथ निभाते हैं, वही सच्चे साथी कहलाते हैं। कहा भी गया है—

*"सच्चा मित्र वही है जो दुःख में साथ दे।"*

रामचरितमानस में भगवान श्रीराम भी वनवास के समय यही अनुभव करते हैं। अयोध्या में रहते समय जिन राजाओं और दरबारियों की भीड़ रहती थी, वे सब एकाएक गायब हो जाते हैं। केवल कुछ गिने-चुने लोग जैसे भरत, लक्ष्मण, शबरी, और निषादराज जैसे भक्तजन ही उनके सच्चे साथी बनते हैं।

इसी प्रकार महाभारत में भी जब पांडवों पर कठिनाइयाँ आती हैं, तो अधिकतर राजाओं ने उनका साथ छोड़ दिया था। लेकिन भगवान श्रीकृष्ण जैसे मित्र ने हर संकट में उनका साथ निभाया। यह सिद्ध करता है कि संकट के समय जो साथ देता है, वही वास्तव में मित्र कहलाने योग्य होता है।

आज के समय में भी यह कहावत पूरी तरह से लागू होती है। व्यावसायिक जीवन में, राजनीति में, सामाजिक जीवन में — हर जगह स्वार्थ की प्रधानता दिखाई देती है। जो ऊँचे पदों पर हैं, जो संपन्न हैं, उनके आसपास लोगों की भीड़ रहती है। जैसे ही वह पद जाता है या संपत्ति घटती है, वही भीड़ छंट जाती है।

इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि वह बनते समय भी अपने व्यवहार में विनम्रता बनाए रखे और बिगड़ते समय धैर्य और साहस से काम ले। उसे चाहिए कि वह सच्चे मित्रों की पहचान करे और उन्हीं पर भरोसा करे।

जीवन में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। हर सफलता स्थायी नहीं होती, और हर असफलता अंतिम नहीं होती। इसलिए न तो सफलता के समय घमंड करना चाहिए, न असफलता के समय निराश होना चाहिए।

अंततः यही कहा जा सकता है कि 'बनले के साथी सब केहू ह अउरी बिगड़ले के केहु नाहीं' — इस कहावत में जीवन का गहरा सत्य छिपा है। जो इसे समय रहते समझ लेता है, वही जीवन में सच्चे संबंधों की परख कर पाता है और एक संतुलित जीवन जीता है।

## 26. जिअते माछी नाहीं घोंटाई (70वीं BPSC)

"जिअते माछी नाहीं घोंटाई" एक प्रसिद्ध लोकप्रचलित कहावत है, जो हमारे जीवन के एक अत्यंत गहरे सत्य को उजागर करती है। इस कहावत का अर्थ है कि जब कोई गलती या अन्याय हमारे सामने होता है, तो उसे अनदेखा करना बहुत कठिन हो जाता है। जैसे एक जीवित मछली को मारना कठिन होता है क्योंकि वह फड़फड़ाती रहती है, वैसे ही जब किसी घटना का साक्षी स्वयं व्यक्ति होता है, तो उसमें निष्क्रिय बने रहना स्वभाव के विरुद्ध होता है। यह कहावत हमारे स्वाभाविक मानवीय व्यवहार और नैतिक चेतना दोनों को दर्शाती है।

मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा है कि वह सामने हो रही किसी गलती, अन्याय या अनुचित कार्य को देखकर चुप नहीं रह सकता। जब हम किसी को गलती करते देखते हैं, चाहे वह परिवार में हो, मित्रों के बीच हो या कार्यस्थल पर, तो स्वाभाविक रूप से हमारे भीतर उसे सुधारने या विरोध करने की भावना जागृत होती है। यदि कोई माता-पिता अपने बच्चों को गलत रास्ते पर चलते देखें तो वे उन्हें तुरंत टोकते हैं। यदि कोई शिक्षक छात्र को अनुचित कार्य करते देखे तो वह उसे सही रास्ता दिखाने का प्रयास करता है। यह मनुष्य की नैतिक जिम्मेदारी का हिस्सा है कि वह अपने सामने घटने वाले अन्याय या त्रुटियों के प्रति सजग रहे और यथासंभव उसे सुधारने का प्रयास करे।

यह कहावत हमारे निजी जीवन में भी कई बार चरितार्थ होती है। परिवार के भीतर यदि कोई सदस्य अनुचित व्यवहार करे या सामाजिक नियमों का उल्लंघन करे, तो उसे अनदेखा करना आसान नहीं होता। चाहे वह छोटा बच्चा हो या कोई वरिष्ठ सदस्य, यदि हम उसकी गलती को अनदेखा कर दें, तो धीरे-धीरे वह गलती बड़ी समस्या बन सकती है। इसलिए सही समय पर हस्तक्षेप करना, मार्गदर्शन देना और आवश्यक सुधार करना एक आवश्यक दायित्व बन जाता है। इसी प्रकार मित्रों के साथ भी जब हम गलत व्यवहार देखते हैं, तो एक सच्चे मित्र का कर्तव्य बनता है कि वह समय रहते सलाह दे, न कि चुप्पी साध ले।

कार्यक्षेत्र में भी "जिअते माछी नाहीं घोंटाई" का सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक है। एक अच्छा नेतृत्वकर्ता वही होता है जो सामने हो रही त्रुटियों को समय रहते पहचानकर उनका समाधान करे। यदि कार्यस्थल पर किसी कर्मचारी द्वारा की जा रही गलतियों को नजरअंदाज कर दिया जाए, तो इससे न केवल कार्यक्षमता प्रभावित होती है, बल्कि पूरी संस्था के वातावरण पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। इसीलिए प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण कार्य यह भी है कि वह सामने हो रही समस्याओं का समाधान तत्परता से करे। यदि सामने की मछली को अनदेखा किया जाए, तो वह पूरे तालाब को गंदा कर सकती है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी इस कहावत का विशेष महत्व है। शिक्षक न केवल ज्ञान का प्रदाता होता है, बल्कि छात्रों के चरित्र निर्माण का भी दायित्व निभाता है। यदि वह छात्रों की अनुशासनहीनता, लापरवाही या अव्यवस्थित व्यवहार को देखकर भी चुप्पी साध ले, तो भविष्य में वही विद्यार्थी समाज के लिए चुनौती बन सकते हैं। एक शिक्षक का कार्य है कि वह समय पर छात्रों की गलतियों को पहचानकर उन्हें सुधार का अवसर दे। इस प्रकार, "जिअते माछी नाहीं घोंटाई" शिक्षक के कार्य का एक अभिन्न हिस्सा बन जाता है।

समाज और राष्ट्र के स्तर पर भी यह कहावत उतनी ही सटीक बैठती है। जब समाज में भ्रष्टाचार, अन्याय, हिंसा, और अनैतिकता के दृश्य हमारे सामने आते हैं, तो एक सजग नागरिक का कर्तव्य बनता है कि वह अपनी भूमिका निभाए। यदि हर नागरिक अपने आसपास के अन्याय को देखकर भी चुप्पी साध ले, तो पूरा समाज अव्यवस्था और अराजकता की ओर बढ़ सकता है। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी, भगत सिंह, नेताजी सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने इसी भावना के तहत अन्याय और दमन का प्रतिकार किया। वे जानते थे कि सामने हो रहे अन्याय को अनदेखा करना, उसे मौन स्वीकृति देना होता है। इसलिए उन्होंने अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए इतिहास रच दिया। आज भी हमें उनसे प्रेरणा लेनी चाहिए और सामाजिक अन्याय के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद करनी चाहिए।

हालाँकि यह भी सही है कि हर छोटी गलती पर प्रतिक्रिया करना भी उचित नहीं होता। विवेकपूर्ण निर्णय लेना आवश्यक है कि किस त्रुटि को क्षमा कर देना चाहिए और किस पर तत्काल प्रतिक्रिया देनी चाहिए। कभी-कभी छोटी गलतियों को नजरअंदाज करना रिश्तों को मजबूत बना सकता है, वहीं गंभीर गलतियों को अनदेखा करना घातक सिद्ध हो सकता है। इसलिए धैर्य, समझदारी और सही समय का चयन आवश्यक है। मनुष्य को परिस्थिति के अनुसार आचरण करना चाहिए और यह तय करना चाहिए कि कब बोलना है और कब चुप रहना है।

यह कहावत हमें आत्मनिरीक्षण की भी प्रेरणा देती है। केवल दूसरों की गलतियों को देखना ही नहीं, बल्कि स्वयं के भीतर झांककर अपनी त्रुटियों को पहचानना और उन्हें सुधारना भी आवश्यक है। यदि हम अपनी गलतियों को जानबूझकर नजरअंदाज करते हैं, तो हमारा व्यक्तिगत विकास रुक जाता है। एक सफल जीवन वही होता है जिसमें व्यक्ति अपनी कमजोरियों को स्वीकार कर उन्हें दूर करने का प्रयास करे। इसीलिए "जिअते माछी नाहीं घोंटाई" हमें अपने भीतर भी सजगता रखने का संदेश देती है।

आज के समय में जब सूचनाओं का प्रवाह तीव्र है और समाज तेजी से बदल रहा है, ऐसे में सजगता और सक्रियता और भी महत्वपूर्ण हो गई है। सोशल मीडिया, समाचार पत्र और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों के जरिए हमारे सामने अनेक घटनाएँ घटती हैं। यदि हम फर्जी खबरों, अफवाहों, या किसी अन्यायपूर्ण घटना को देखकर भी निष्क्रिय बने रहें, तो हम भी उस अन्याय के भागीदार बन जाते हैं। इसलिए आज के युग में जागरूक नागरिक बनना और सामने हो रही गलतियों के प्रति संवेदनशील रहना अनिवार्य हो गया है।

"जिअते माछी नाहीं घोंटाई" जीवन का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है, जो हमें सिखाता है कि जहां आवश्यक हो वहां चुप्पी तोड़नी चाहिए और जहां आवश्यक हो वहां क्षमा भाव अपनाना चाहिए। जीवन में संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। हमें सजग रहते हुए गलतियों को पहचानना, विवेक से निर्णय लेना और साहसपूर्वक सुधार करना चाहिए। तभी हम एक सच्चे नागरिक, एक आदर्श मित्र, एक जिम्मेदार परिवारजन और एक सफल व्यक्तित्व बन सकते हैं। यह कहावत केवल शब्दों तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे आचरण में लाना ही इसका सच्चा सम्मान है।

## 27. बापक नाम साग पात आ बेटाक नाम परोर (70वीं BPSC)

ग्रामीण जीवन में एक प्रसिद्ध कहावत है — "बापक नाम साग-पात आ बेटाक नाम परोर"। इस कहावत का अर्थ है कि पिता को साधारण सब्ज़ियों (जैसे साग-पात) के समान साधारण समझा जाए, जबकि बेटा खुद को परोर (परवल जैसी विशिष्ट सब्ज़ी) के समान महत्त्वपूर्ण माने। यह कहावत समाज में बढ़ते दिखावे और मूल्यों में आई गिरावट पर गहरा व्यंग्य करती है।

किसी गाँव में एक साधारण किसान रहते थे। वे मेहनत और ईमानदारी से जीवन यापन करते थे। उनका बेटा पढ़-लिखकर शहर चला गया और वहाँ नौकरी करने लगा। धीरे-धीरे उसे अपने नए जीवन पर अभिमान होने लगा। जब वह गाँव लौटता, तो वह खुद को बड़ा अधिकारी समझता और पिता को तुच्छ किसान मानने लगता। गाँव के एक बुजुर्ग ने तब यह टिप्पणी की — "बापक नाम साग-पात आ बेटाक नाम परोर।" यानी बेटा खुद को परोर (एक सम्मानित सब्जी) जैसा महत्वपूर्ण मान रहा है और बाप को साधारण साग-पात समझ रहा है।

## खंड-1: अमूर्त निबंध

### 1. जीवन का अर्थ और उद्देश्य क्या है?

"मनुष्य अपने कर्मों से ही अपने जीवन का अर्थ पहचानता है।" – स्वामी विवेकानंद

एक छोटे से गाँव में रवि नाम का लड़का रहता था। वह पढ़ाई में होशियार था, लेकिन हमेशा जीवन के महत्व और अपने उद्देश्य के बारे में सोचता रहता। वह अक्सर दोस्तों से पूछता, "जीवन का असली अर्थ क्या है? मैं क्यों जी रहा हूँ?" एक दिन उसके शिक्षक ने उसे समझाया, "रवि, जीवन केवल सांस लेने और जीने तक सीमित नहीं है। इसका असली अर्थ वह है जिसे तुम अपने कर्मों, अनुभवों और सेवा के माध्यम से प्राप्त करते हो। जब तुम अपने जीवन का उद्देश्य समझते हो, तभी तुम्हारा जीवन सार्थक बनता है।" उस दिन से रवि ने अपने जीवन के हर पहलू पर ध्यान देना शुरू किया और धीरे-धीरे उसे समझ में आने लगा कि जीवन का अर्थ और उद्देश्य केवल भौतिक सुखों या मान्यता तक सीमित नहीं है।

जीवन का अर्थ और उद्देश्य हर व्यक्ति के लिए भिन्न हो सकता है। किसी के लिए यह ज्ञान प्राप्त करना हो सकता है, किसी के लिए दूसरों की सेवा करना, किसी के लिए परिवार और समाज में योगदान देना। हालांकि, जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य स्वयं की पहचान करना और अपने अस्तित्व को समझना है। जब व्यक्ति अपने अस्तित्व को समझता है, तभी वह अपने जीवन के हर क्षण को सही अर्थ में जी सकता है। जीवन एक यात्रा है, जिसमें अनुभव, संघर्ष, सुख-दुःख, सफलता और असफलता सभी शामिल हैं। ये अनुभव हमें जीवन का वास्तविक मूल्य समझाते हैं।

अक्सर लोग जीवन का अर्थ केवल भौतिक सुखों में तलाशते हैं। वे धन, पद, समाज में मान्यता या प्रतिष्ठा प्राप्त करना ही जीवन का उद्देश्य मान लेते हैं। जबकि यह आवश्यक है कि हम जीवन में आर्थिक और सामाजिक स्थिति के प्रति जागरूक रहें, लेकिन केवल भौतिक सुखों के पीछे भागने से जीवन का वास्तविक अर्थ नहीं निकलता। जीवन का वास्तविक उद्देश्य वह है जिसमें हम अपने आत्मिक विकास, नैतिक मूल्यों और मानसिक संतुलन को महत्व देते हैं। जब हम अपने जीवन में सच्चाई, ईमानदारी और करुणा को अपनाते हैं, तब जीवन का अर्थ स्पष्ट होता है।

एक उदाहरण इसे और स्पष्ट करता है। एक छोटे गाँव में एक वृद्ध व्यक्ति अपने समय का अधिकांश भाग दूसरों की मदद में बिताता था। लोग उसे समय और मेहनत का अपव्यय मानते थे, लेकिन वृद्ध व्यक्ति हमेशा मुस्कुराता और संतुष्ट रहता। एक दिन गाँव के बच्चों ने उससे पूछा, "आप इतने सालों तक बिना कुछ मांगे दूसरों की मदद क्यों करते रहते हैं?" वृद्ध ने उत्तर दिया, "जीवन का उद्देश्य केवल जीने तक सीमित नहीं है। जीवन का असली उद्देश्य दूसरों के जीवन को बेहतर बनाना और उनके चेहरे पर मुस्कान लाना है। यही मेरे जीवन का सार है।" इस सरल लेकिन प्रभावशाली उत्तर में जीवन के वास्तविक उद्देश्य का दर्शन छुपा हुआ है।

जीवन का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत विकास में भी नहीं है। यह सामाजिक और मानवीय कर्तव्यों से भी जुड़ा है। जब हम समाज में योगदान करते हैं, दूसरों की मदद करते हैं और न्याय के मार्ग पर चलते हैं, तभी हमारा जीवन सार्थक बनता है। महात्मा गांधी ने अपने जीवन में सत्य और अहिंसा का मार्ग अपनाकर समाज में बदलाव लाने का प्रयास किया। उन्होंने जीवन को केवल व्यक्तिगत सुख के रूप में नहीं देखा, बल्कि इसे समाज की भलाई के लिए समर्पित किया।

साहित्य और काव्य में भी जीवन के अर्थ को विभिन्न दृष्टिकोणों से प्रस्तुत किया गया है। कबीर ने कहा है, "काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।" इसका अर्थ है कि जीवन क्षणिक है और इसे सही दिशा में उपयोग करना ही इसका उद्देश्य है। रवींद्रनाथ ठाकुर ने अपने गीतों और काव्य में जीवन के गहरे अर्थ और उसके उद्देश्य को उजागर किया है। उन्होंने बताया कि जीवन केवल भौतिक सुखों में नहीं, बल्कि प्रेम, करुणा, और सृजनात्मक कार्यों में सार्थक होता है।

आधुनिक जीवन में भी यह बात प्रासंगिक है। आज लोग अक्सर जीवन के अर्थ को केवल सफलता और धन में तलाशते हैं। जबकि वास्तविक जीवन वह है जिसमें हम अपने आत्मिक और मानसिक संतुलन को बनाए रखें। योग, ध्यान और आत्म-विश्लेषण इस मार्ग में सहायक हैं। यह हमें अपने भीतर की शक्ति और जीवन के गहरे अर्थ को समझने में मदद करता है। जब हम अपने जीवन के हर क्षण को पूरी निष्ठा और प्रेम के साथ जीते हैं, तब हम जीवन के वास्तविक उद्देश्य को समझ पाते हैं।

जीवन का उद्देश्य केवल मृत्यु के बाद के लिए नहीं है। जीवन का हर क्षण महत्व रखता है। हमें प्रत्येक क्षण को पूर्णता के साथ जीने का प्रयास करना चाहिए। जब हम अपने वर्तमान क्षण में पूरी तरह मौजूद रहते हैं और उसका आनंद लेते हैं, तब हम जीवन के वास्तविक उद्देश्य को समझ पाते हैं। जीवन के प्रत्येक अनुभव, चाहे सुखद हो या कठिन, हमें कुछ सिखाता है और हमारे आत्मिक विकास में योगदान करता है।

समाज और राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारी भी जीवन के उद्देश्य का हिस्सा है। यदि हम केवल अपने लिए जीते हैं, तो जीवन का अर्थ अधूरा रह जाता है। वही व्यक्ति अपने जीवन को सार्थक बनाता है, जो अपने परिवार, समाज और देश के लिए योगदान देता है। जब हम अपने कार्यों और कर्मों के माध्यम से दूसरों के जीवन को बेहतर बनाते हैं, तब हम जीवन के उद्देश्य को प्राप्त करते हैं।

अंततः, जीवन का अर्थ और उद्देश्य यह नहीं कि हम कितना धन या पद प्राप्त करते हैं, बल्कि यह है कि हम अपने जीवन के माध्यम से समाज, परिवार और स्वयं के लिए कितना सकारात्मक योगदान दे सकते हैं। जीवन का वास्तविक अर्थ वह है जिसमें हम अपने आत्मिक विकास, नैतिक मूल्य, सामाजिक कर्तव्य और मानसिक संतुलन को महत्व देते हैं। जब हम अपने जीवन को इस दृष्टिकोण से जीते हैं, तभी यह सार्थक और पूर्ण बनता है।

"सच्चा जीवन वही है, जिसमें हम दूसरों के लिए जीते हैं और अपने भीतर की सच्चाई को पहचानते हैं।"

## 2. समय का सदुपयोग क्यों आवश्यक है?

एक छोटे से गाँव में अर्जुन नाम का एक लड़का रहता था। वह होशियार था, लेकिन हमेशा समय का सही उपयोग नहीं करता था। दिन भर खेल-कूद, दोस्तों के साथ बातें और अनावश्यक कामों में समय बिताने के बाद जब पढ़ाई या अन्य जरूरी कार्य करने का समय आता, तो वह आलस्य और थकान के कारण कुछ भी ठीक से नहीं कर पाता। धीरे-धीरे उसके परिणाम बिगड़ने लगे और माता-पिता परेशान होने लगे। एक दिन उसके शिक्षक ने उसे समझाया, "अर्जुन, समय वह धन है जिसे खर्च किया जा सकता है, लेकिन एक बार खो जाने पर यह कभी वापस नहीं आता। यदि तुम समय का सदुपयोग नहीं करोगे, तो सफलता और खुशियाँ तुमसे दूर हो जाएंगी।" उस दिन से अर्जुन ने समय का महत्व समझा और अपने हर दिन की योजना बनाने लगा। उसने पढ़ाई, खेल और आराम के लिए समय तय किया। परिणामस्वरूप न केवल उसकी पढ़ाई में सुधार हुआ, बल्कि वह मानसिक रूप से भी संतुलित और खुश रहने लगा।

समय का सदुपयोग हमारे जीवन की सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है। समय वह अनमोल संसाधन है जो किसी के पास सीमित मात्रा में होता है। इसे खोया नहीं जा सकता और एक बार चला जाए तो कभी वापस नहीं आता। जीवन में सफलता, ज्ञान, अनुभव और मानसिक संतोष प्राप्त करने के लिए समय का सही उपयोग अत्यंत आवश्यक है। जो व्यक्ति समय का मूल्य समझता है और इसका सही प्रयोग करता है, वही जीवन में तरक्की और सम्मान प्राप्त कर पाता है।

समय का सदुपयोग केवल पढ़ाई या नौकरी तक सीमित नहीं है। यह हमारे स्वास्थ्य, आत्मिक विकास, सामाजिक संबंधों और मानसिक संतुलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि हम अपना समय व्यर्थ गतिविधियों में बिताते हैं, तो हमारी तरक्की रुक जाती है और हम जीवन में पीछे रह जाते हैं। वहीं, यदि हम समय का योजनाबद्ध तरीके से उपयोग करें, तो हम अपने व्यक्तिगत और पेशेवर लक्ष्यों को जल्दी और बेहतर तरीके से प्राप्त कर सकते हैं।

समय का सदुपयोग अनुशासन भी सिखाता है। जब हम अपने समय को नियंत्रित तरीके से उपयोग करते हैं, तो हमारे जीवन में संतुलन और क्रम स्थापित होता है। यह अनुशासन न केवल हमारी व्यक्तिगत क्षमता बढ़ाता है, बल्कि समाज में हमारी भूमिका को भी प्रभावशाली बनाता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति समय का सही उपयोग करके न केवल अपनी पढ़ाई या कार्य में सफलता प्राप्त करता है, बल्कि दूसरों की मदद और सामाजिक जिम्मेदारियों में भी समय देता है, तो उसका जीवन अत्यंत सार्थक बन जाता है।

प्राचीन समय से ही विद्वानों और समाजशास्त्रियों ने समय के महत्व को समझाया है। कबीर ने कहा था, "काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।" इसका अर्थ है कि समय का कोई भरोसा नहीं और इसे बिना विलंब किए उपयोग करना चाहिए। इसी तरह, स्वामी विवेकानंद ने कहा था, "उठो, जागो और तब तक मत रुको जब तक लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए।" इन महान विचारकों ने समय को केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि जीवन में सफलता और आदर्श प्राप्त करने का आधार बताया है।

समय का सदुपयोग हमें मानसिक संतोष भी प्रदान करता है। जब हम अपने कार्यों के लिए समय निर्धारित करते हैं और उनका पालन करते हैं, तो मन में संतुलन और आत्मविश्वास पैदा होता है। वहीं, समय का दुरुपयोग चिंता, तनाव और असफलता की ओर ले जाता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई छात्र समय पर पढ़ाई नहीं करता और आलस्य में समय गवां देता है, तो परीक्षा में उसकी तैयारी अधूरी रह जाती है और परिणाम उसके अनुकूल नहीं होते। वहीं, जो छात्र समय का सदुपयोग करता है, वह न केवल पढ़ाई में बेहतर परिणाम प्राप्त करता है, बल्कि जीवन में भी अनुशासित और सफल बनता है।

समय का सदुपयोग केवल व्यक्तिगत जीवन के लिए ही नहीं, बल्कि सामाजिक और राष्ट्रीय विकास के लिए भी आवश्यक है। जो व्यक्ति अपने समय का सही उपयोग करके कार्य करता है, वह समाज और राष्ट्र के लिए योगदान देने में सक्षम होता है। महात्मा गांधी ने अपने जीवन में समय का सदुपयोग करते हुए सत्य और अहिंसा का मार्ग अपनाया और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अमूल्य योगदान दिया। यदि हम उनके जीवन से सीख लें, तो समझ सकते हैं कि समय का सही उपयोग व्यक्ति और समाज दोनों के लिए कितना महत्वपूर्ण है।

आज के आधुनिक जीवन में समय का महत्व और भी बढ़ गया है। तकनीकी और डिजिटल युग में हर कोई व्यस्त है, और समय की कीमत अत्यधिक बढ़ गई है। ऐसे में समय का सदुपयोग न केवल सफलता के लिए, बल्कि मानसिक संतोष और जीवन में स्थिरता के लिए भी आवश्यक है। हमें अपने दैनिक कार्यों की योजना बनानी चाहिए और समय का उचित वितरण करना चाहिए। उदाहरण के लिए, सुबह का समय पढ़ाई या महत्वपूर्ण कार्यों के लिए सबसे उपयुक्त होता है, जबकि शाम का समय आराम, खेल या परिवार के लिए उपयोगी है। इस तरह का संतुलन हमें जीवन के हर क्षेत्र में सफलता और संतोष प्रदान करता है।

समय का सदुपयोग छोटे-छोटे निर्णयों और आदतों से शुरू होता है। जैसे कि सुबह जल्दी उठना, काम को प्राथमिकता देना, व्यर्थ गतिविधियों से बचना और अपने लक्ष्य पर ध्यान केंद्रित करना। यह आदत धीरे-धीरे जीवन की गुणवत्ता और परिणामों में बड़ा बदलाव लाती है। समय का सही उपयोग न केवल व्यक्तिगत सफलता सुनिश्चित करता है, बल्कि हमें जीवन के हर क्षेत्र में अनुशासित और सशक्त बनाता है।

समय का सदुपयोग हमारे आत्मिक विकास और नैतिक मूल्य के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। जब हम अपने समय का सही उपयोग करते हैं, तो हम अपने भीतर की सच्चाई, आत्मविश्वास और धैर्य को पहचान पाते हैं। यह हमें कठिन परिस्थितियों में भी सही निर्णय लेने और जीवन के संघर्षों का सामना करने में मदद करता है। जीवन में छोटी-छोटी आदतें और अनुशासन समय के सदुपयोग से जुड़ी होती हैं और यही जीवन की सफलता और संतोष की कुंजी है।

अंततः, समय का सदुपयोग हमारे जीवन को सार्थक बनाता है। यह हमें लक्ष्य प्राप्ति की ओर ले जाता है, अनुशासन सिखाता है, मानसिक संतुलन प्रदान करता है और व्यक्तिगत तथा सामाजिक विकास में मदद करता है। जैसे अर्जुन ने समय का महत्व समझकर अपने जीवन में सुधार किया, वैसे ही यदि हम समय का सदुपयोग करेंगे, तो हम अपने जीवन को सफल और सार्थक बना सकते हैं।

समय का सदुपयोग केवल एक आदत नहीं, बल्कि जीवन का आधार है। यही आदत हमें जीवन में सफलता, संतोष और सम्मान दोनों प्रदान करती है। हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि समय न तो रुका है और न ही रुक सकता है, इसलिए इसे व्यर्थ न जाने दें और प्रत्येक क्षण का पूर्ण उपयोग करें।

"जो समय का सही उपयोग करता है, वही जीवन में सच्ची सफलता और संतोष प्राप्त करता है।"

## 3. सफलता में असफलता की भूमिका।

सफलता और असफलता जीवन के दो ऐसे पहलू हैं जो हमेशा साथ चलते हैं। जीवन में हर किसी के मार्ग में कठिनाइयाँ आती हैं, और हर कठिनाई हमें कुछ न कुछ सिखाती है। प्राचीन समय की एक कहानी याद आती है। एक किसान हर साल अपनी फसल उगाने की कोशिश करता, लेकिन बार-बार असफल रहता। लोग उसे ताना मारते, कहते, "तुम यह कभी नहीं कर सकते।" लेकिन किसान ने हार नहीं मानी। उसने मिट्टी की जांच की, बीज बदले, मेहनत बढ़ाई और नए तरीके अपनाए। अगले साल उसने अपने खेत में सबसे अच्छी फसल उगाई। यह कहानी हमें यही सिखाती है कि असफलता जीवन में सीखने और आगे बढ़ने का अवसर देती है।

जीवन में सफलता सहजता से नहीं मिलती। कई लोग असफलताओं से डरकर कोशिश करना छोड़ देते हैं, जबकि सच्चा विजेता वही है जो अपनी असफलताओं से सीखकर और अधिक मेहनत करता है। थॉमस एडिसन ने हजारों बार बल्ब बनाने की कोशिश की और असफल हुए, लेकिन उन्होंने कभी हार नहीं मानी। अंततः उन्होंने ऐसा आविष्कार किया जिसने पूरी दुनिया को रोशनी दी। उनकी असफलताएँ ही उनकी सफलता की नींव बनीं।

असफलता हमें धैर्य और साहस सिखाती है। जब हम किसी कठिनाई का सामना करते हैं और उसे पार कर लेते हैं, तो हमें अपने अंदर की शक्ति का एहसास होता है। जैसे भगवद्गीता में कहा गया है:
"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि॥" – भगवद्गीता,
इसका अर्थ है कि केवल अपने कर्म पर ध्यान देना चाहिए, परिणाम पर नहीं। असफलता हमें यही सिखाती है कि मेहनत और प्रयास ही असली मूल्य रखते हैं।

साहित्य में भी असफलताओं का महत्व बताया गया है। कबीरदास जी ने लिखा है:
"कबीरा खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाठी हाथ; जो घर फूँके आपना, चले हमारे साथ।" – कबीरदास
कविता यह संदेश देती है कि असफलताओं से डरना नहीं चाहिए। वे हमें मजबूत बनाती हैं और सही दिशा में आगे बढ़ने का अवसर देती हैं। महात्मा गांधी भी कई असफलताओं के बावजूद हार नहीं माने और स्वतंत्रता संग्राम में सफलता प्राप्त की। – महात्मा गांधी

हिंदी कविता में भी असफलता और प्रयास का महत्व उजागर किया गया है। सूरदास ने लिखा है:
"असफल नहीं है जो प्रयास करता है, गिर कर उठना ही वीरता है।" – सूरदास
इस पंक्ति से यह स्पष्ट होता है कि असफलता जीवन में अनुभव और सीख का माध्यम है। गिरना और फिर उठना ही सच्ची सफलता की पहचान है।

सफलता और असफलता केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं हैं। व्यवसाय, खेल और समाज के हर क्षेत्र में असफलताएँ सीखने का अवसर देती हैं। उदाहरण के लिए, किसी कंपनी का नया उत्पाद असफल हो सकता है, लेकिन यदि कंपनी अपनी गलतियों से सीखती है, तो भविष्य में वह और अधिक सफल होती है। खेल में हारने वाली टीम भी अपनी रणनीति सुधारकर और अभ्यास करके भविष्य में जीत हासिल कर सकती है।

असफलता हमें अनुशासन, निरंतर प्रयास और धैर्य सिखाती है। लगातार प्रयास करने के बावजूद असफलताओं का सामना करना हमें सतर्क और मेहनती बनाता है। यही प्रक्रिया केवल सफलता ही नहीं, बल्कि जीवन में परिपक्वता और मानसिक स्थिरता भी देती है।

सफलता में असफलता की भूमिका पर एक और संस्कृत श्लोक बहुत उपयुक्त है:
"विद्यया अमृतमश्नुते" – महाभारत
अर्थात्, ज्ञान और अनुभव के माध्यम से ही मनुष्य श्रेष्ठ बनता है। असफलताओं से मिलने वाला अनुभव और सीख ही हमें मजबूत बनाती है और सफलता की ओर ले जाती है।

सफलता केवल परिणामों तक ही सीमित नहीं है। यह हमें धैर्य, परिश्रम, आत्मविश्वास और सकारात्मक दृष्टिकोण का महत्व भी सिखाती है। असफलताओं को अनुभव, शिक्षा और आत्मविकास का माध्यम मानकर ही हम जीवन में स्थायी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

अंत में, प्रेरक श्लोक के रूप में यह कहना उपयुक्त है:
"कर्म करो हि फल की चिंता किए बिना, सफलता तुम्हारे कदम चूमेगी।" – स्वामी विवेकानंद

सफलता और असफलता जीवन के अनिवार्य अंग हैं। असफलताओं से डरकर पीछे हटने के बजाय, उन्हें सीख और अवसर के रूप में स्वीकार करना ही हमें जीवन में आगे बढ़ने और स्थायी सफलता प्राप्त करने में सक्षम बनाता है।

## 4. समाज में नैतिकता का महत्व।

"सत्य की राह पर चलो, धर्म का दीप जलाओ,
ईमानदारी और करुणा से, समाज को सजाओ।" – कबीरदास

यह पंक्ति हमें यह संदेश देती है कि नैतिकता केवल व्यक्तिगत गुण नहीं है, बल्कि समाज की आत्मा है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में ईमानदारी, सत्य और करुणा का पालन करता है, तो समाज में शांति, सहयोग और विश्वास स्थापित होता है। नैतिकता समाज का आधार है, और इसके बिना समाज की कल्पना असंभव है।

समाज में नैतिकता का महत्व अत्यंत गहरा है। प्राचीन काल की एक कहानी यह स्पष्ट करती है। एक छोटे गाँव में रामलाल नाम का व्यक्ति रहता था। वह हमेशा ईमानदार, दयालु और सत्यनिष्ठ था। गाँव में एक बार सूखा पड़ गया और फसलें नष्ट हो गईं। गाँव वाले परेशान हो गए, लेकिन रामलाल ने न केवल अपने अन्न और पानी बाँटे, बल्कि सभी की समस्याओं को हल करने में मदद की। इस घटना से सभी ने यह समझा कि नैतिकता केवल शब्दों में नहीं, बल्कि कर्मों में व्यक्त होती है।

समाज में यदि लोग केवल अपने स्वार्थ के पीछे भागते हैं, तो अव्यवस्था, भ्रष्टाचार और अपराध बढ़ते हैं। इसके विपरीत, यदि लोग नैतिकता का पालन करते हैं, तो सहयोग, न्याय और भाईचारा बढ़ता है। नैतिकता के बिना समाज में विश्वास और स्थायित्व नहीं रह सकता।

संस्कृत में भी नैतिकता के महत्व को स्पष्ट किया गया है। भगवद्गीता में कहा गया है:
"धर्मो रक्षति रक्षितः" – भगवद्गीता
अर्थात्, धर्म और नैतिकता वही समाज और व्यक्ति की रक्षा करते हैं, जो इन्हें निभाते हैं। यह श्लोक हमें यह सिखाता है कि नैतिकता केवल व्यक्तिगत गुण नहीं, बल्कि समाज के स्थायित्व और विकास की नींव है।

हिंदी साहित्य में भी नैतिकता को सर्वोपरि माना गया है। सूरदास जी ने लिखा है:
"सत्य बोलो, धर्म निभाओ, हर कष्ट को सहज पाओ।" – सूरदास
यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि नैतिकता का पालन करने वाला व्यक्ति न केवल समाज में सम्मान पाता है, बल्कि स्वयं भी मानसिक शांति और संतोष अनुभव करता है।

समाज में नैतिकता केवल व्यक्तिगत जीवन तक सीमित नहीं है। प्रशासनिक और राजनीतिक व्यवस्था में नैतिकता का अभाव भ्रष्टाचार, अन्याय और असमानता बढ़ाता है। इसके विपरीत, यदि सभी नागरिक और अधिकारी नैतिक मूल्यों का पालन करें, तो समाज में न्याय और संतुलन स्थापित होता है। विद्यालय, परिवार और सामुदायिक जीवन में नैतिक शिक्षा का महत्व इसलिए है कि यह बच्चों में जिम्मेदारी, संवेदनशीलता और समाज के प्रति सम्मान विकसित करती है।

समाज में नैतिकता और सामाजिक जिम्मेदारी के बीच गहरा संबंध है। यदि हर व्यक्ति केवल अपने स्वार्थ की चिंता करता है, तो समाज असंतुलित और अव्यवस्थित हो जाता है। नैतिकता हमें सिखाती है कि व्यक्तिगत लाभ और समाज की भलाई दोनों को संतुलित करना आवश्यक है। यही कारण है कि प्रत्येक धर्म और संस्कृति में नैतिकता को सर्वोपरि माना गया है।

संस्कृत श्लोक में भी यही संदेश मिलता है:
"सत्यमेव जयते नानृतम्" – मुण्डक उपनिषद
अर्थात्, सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। यही सिद्धांत समाज में नैतिक मूल्यों और स्थायित्व का आधार बनता है।

समाज में नैतिकता केवल कानून और नियमों तक सीमित नहीं है। यह एक सामाजिक और आध्यात्मिक जिम्मेदारी भी है। यदि समाज में लोग नैतिकता का पालन करें, तो अपराध, असमानता और भ्रष्टाचार कम होंगे। लोगों में आपसी सम्मान और सहयोग बढ़ेगा। नैतिक समाज में प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा और अधिकार सुरक्षित रहते हैं।

एक और कहानी इस तथ्य को उजागर करती है। शहर के एक स्कूल में शिक्षक ने देखा कि कुछ बच्चे चोरी कर रहे थे। शिक्षक ने उन्हें डांटा नहीं, बल्कि समझाया कि ईमानदारी और नैतिकता का पालन क्यों जरूरी है। उन्होंने बच्चों को प्रेरित किया कि समाज में विश्वास और सम्मान तभी बनता है जब हम नैतिक मूल्यों का पालन करें। धीरे-धीरे बच्चे सुधार गए और स्कूल में अनुशासन और सहयोग की भावना स्थापित हुई।

समाज में नैतिकता का पालन करना केवल व्यक्तिगत कर्तव्य नहीं है, बल्कि हर नागरिक का सामाजिक जिम्मा भी है। यदि हम अपने कर्तव्यों का पालन करेंगे और नैतिक मूल्यों का सम्मान करेंगे, तो समाज में शांति, न्याय और समृद्धि सुनिश्चित होगी।

अंत में, प्रेरक श्लोक के रूप में यह कहना उपयुक्त है:
"कर्म करो हि फल की चिंता किए बिना, सफलता तुम्हारे कदम चूमेगी।" – स्वामी विवेकानंद

समाज में नैतिकता केवल नियम या शब्द नहीं, बल्कि कार्य और व्यवहार में प्रकट होती है। यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में सत्य, ईमानदारी, करुणा और धर्म का पालन करेगा, तो समाज में विश्वास, सहयोग और भाईचारा बढ़ेगा। यही नैतिकता समाज को स्थायित्व, शांति और प्रगति की ओर ले जाती है।

## 5. विज्ञान और तकनीक का मानव जीवन पर प्रभाव।

"विद्या ददाति विनयं, विनयाद्याति पात्रताम्। पात्रत्वात्धनमाप्नोति, धनात्धर्मं ततः सुखम्।" – महाभारत

यह श्लोक हमें यह समझाता है कि ज्ञान और विज्ञान से ही विनम्रता, पात्रता, और अंततः सुख प्राप्त होता है। विज्ञान और तकनीक ने मानव जीवन को पहले की तुलना में अधिक सरल, सुविधाजनक और ज्ञानपूर्ण बना दिया है। आज हम जिस दुनिया में रह रहे हैं, उसमें विज्ञान और तकनीक के बिना जीवन की कल्पना करना कठिन है।

प्राचीन काल की एक घटना याद आती है। एक छोटे गाँव में लोग हर दिन दूर दराज के बाजार से अपने दैनिक आवश्यक सामान लाने जाते थे। यात्राएँ लंबी और कठिन होती थीं। लेकिन जब गाँव में पहली बार बिजली और सड़क की सुविधा आई, तो गाँव वालों का जीवन बदल गया। अब बच्चे रात में पढ़ सकते थे, महिलाएँ अपने कार्य जल्दी निपटा सकती थीं और व्यापारी आसानी से अपने सामान को बाजार तक पहुँचाने लगे। यह घटना स्पष्ट करती है कि विज्ञान और तकनीक ने मानव जीवन में समय, श्रम और सुविधाओं की दृष्टि से क्रांतिकारी बदलाव लाया है।

विज्ञान और तकनीक के प्रभाव केवल जीवन को आसान बनाने तक ही सीमित नहीं हैं। चिकित्सा विज्ञान ने मानव जीवन की गुणवत्ता और आयु बढ़ा दी है। पुराने समय में रोगों का इलाज मुश्किल था और कई लोग समय से पहले ही जीवन त्याग देते थे। आज अत्याधुनिक तकनीक और चिकित्सा उपकरणों की मदद से अनेक जानें बचाई जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, एमआरआई, सीटी स्कैन और आधुनिक शल्य चिकित्सा ने मानव जीवन में चमत्कार कर दिया है।

शिक्षा क्षेत्र में भी तकनीक ने क्रांति ला दी है। पहले छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने के लिए पुस्तकों और गुरुओं पर निर्भर रहना पड़ता था। आज इंटरनेट, ऑनलाइन शिक्षा और डिजिटल उपकरणों ने ज्ञान की पहुँच को सीमाओं से मुक्त कर दिया है। दूर-दराज के गाँव के बच्चे भी अब विश्वस्तरीय शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

विज्ञान और तकनीक ने संचार के क्षेत्र में भी मानव जीवन को बदल दिया है। पहले संदेश पहुँचाने में दिन और महीने लग जाते थे। आज मोबाइल, ईमेल, सोशल मीडिया और वीडियो कॉल की मदद से हम किसी भी व्यक्ति से दुनिया के किसी भी कोने में तुरंत जुड़ सकते हैं। यह न केवल व्यक्तिगत जीवन में सुविधा देता है, बल्कि व्यवसाय और वैश्विक व्यापार को भी गति देता है।

हालांकि, विज्ञान और तकनीक के अत्यधिक उपयोग से कुछ नकारात्मक प्रभाव भी समाज पर पड़े हैं। लोगों में व्यक्तिगत संवाद कम हुआ है, पर्यावरण प्रदूषण बढ़ा है, और युवा पीढ़ी अधिक समय डिजिटल माध्यमों में व्यतीत कर रही है। इसलिए विज्ञान और तकनीक का उपयोग सोच-समझकर और संतुलन के साथ करना आवश्यक है।

हिंदी कविता में भी विज्ञान और ज्ञान के महत्व को उजागर किया गया है:
"ज्ञान के प्रकाश से मिटती अज्ञान की रात,
विज्ञान की शक्ति से बदलता संसार का स्वरूप।" – सुमित्रानंदन पंत
यह पंक्ति स्पष्ट करती है कि विज्ञान और तकनीक केवल जीवन को सुविधाजनक नहीं बनाते, बल्कि समाज और मानव चेतना को भी विकसित करते हैं।

संस्कृत श्लोक में भी ज्ञान और विज्ञान के महत्व को बताया गया है:
"सर्वं विज्ञानं महत्तमम्" – महाभारत
अर्थात्, विज्ञान और ज्ञान सबसे महान है। यही शक्ति मानव को अपने जीवन में उन्नति और सफलता दिलाती है।

विज्ञान और तकनीक ने मानव जीवन में मनोरंजन, यात्रा, विज्ञान अनुसंधान, कृषि और उद्योग में भी अद्भुत योगदान दिया है। कृषि में आधुनिक मशीनरी, सिंचाई प्रणाली और उन्नत बीजों ने अन्न उत्पादन में वृद्धि की है। उद्योगों में ऑटोमेशन और रोबोटिक्स ने उत्पादन को तेज, सुरक्षित और कुशल बनाया है।

समाज में विज्ञान और तकनीक का प्रभाव केवल भौतिक सुविधाओं तक ही सीमित नहीं है। यह हमारे सोचने-समझने के दृष्टिकोण को भी बदलता है। शोध और अनुसंधान के माध्यम से हम नई खोज कर सकते हैं, नई तकनीक विकसित कर सकते हैं और मानवता के लिए बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

समय की आवश्यकता और मानव जीवन की गति के अनुरूप विज्ञान और तकनीक ने मानव को सशक्त बनाया है। लेकिन यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि तकनीक का अत्यधिक प्रयोग समाज में नैतिक और सामाजिक जिम्मेदारी के बिना हानि भी पहुँचा सकता है। अतः इसका संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग ही हमारे विकास और समाज के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण है।

अंत में प्रेरक श्लोक के रूप में यह कहना उपयुक्त होगा:
"विद्यायामृतमश्नुते" – महाभारत
अर्थात्, ज्ञान और विज्ञान के माध्यम से ही मनुष्य श्रेष्ठता और अमरता प्राप्त करता है। विज्ञान और तकनीक का सही मार्ग पर उपयोग मानव जीवन को सुख, समृद्धि और प्रगति की ओर ले जाता है।

## 6. शिक्षा: ज्ञान का माध्यम या चरित्र निर्माण का साधन?

"विद्या ददाति विनयं, विनयाद्याति पात्रताम्। पात्रत्वात्धनमाप्नोति, धनात्धर्मं ततः सुखम्।" – महाभारत

यह श्लोक हमें यह समझाता है कि शिक्षा केवल ज्ञान देने का साधन नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के चरित्र और जीवन मूल्यों का निर्माण भी करती है। आज के आधुनिक युग में शिक्षा का महत्व केवल किताबी ज्ञान तक सीमित नहीं रह गया है। यह व्यक्ति के नैतिक और सामाजिक जीवन की दिशा भी निर्धारित करती है।

प्राचीन काल की एक घटना याद आती है। एक छोटे गाँव में एक शिक्षक रहते थे। वह अपने छात्रों को केवल गणित और विज्ञान नहीं पढ़ाते थे, बल्कि उन्हें ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, सहयोग और दया जैसे मूल्य भी सिखाते थे। एक बार गाँव में बच्चों ने एक गरीब मित्र की मदद करने के लिए अपने स्वयं के पैसे बचाए और उसे शिक्षा सामग्री दिलाई। यह घटना दिखाती है कि शिक्षा केवल ज्ञान नहीं देती, बल्कि समाज और मानवता के प्रति जिम्मेदारी भी सिखाती है।

आजकल अक्सर यह बहस होती है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य क्या होना चाहिए – केवल ज्ञान देना या चरित्र निर्माण करना। अगर शिक्षा केवल ज्ञान तक सीमित रहे, तो समाज में लोग केवल जानकारी रखने वाले बन जाएंगे, लेकिन उनमें सहानुभूति, नैतिकता और सामाजिक जिम्मेदारी नहीं होगी। दूसरी ओर, यदि शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण है, तो व्यक्ति न केवल ज्ञान प्राप्त करता है, बल्कि समाज में उत्तरदायित्वपूर्ण और सम्मानित नागरिक बनता है।

# खंड-2: मूर्त निबंध

## 1. भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तीकरण की वर्तमान स्थिति : राजनीतिक सहभागिता के विशेष संदर्भ में

"लोकतंत्र की वास्तविक सफलता तब ही मानी जा सकती है, जब उसके निर्णय-निर्माण में महिलाओं की समान भागीदारी हो।" यह कथन भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तीकरण की मूल भावना को अभिव्यक्त करता है। भारत जैसे विशाल और विविधतापूर्ण देश में लोकतंत्र केवल मत देने तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें शासन, नीति-निर्माण और निर्णय प्रक्रियाओं में सभी वर्गों की सक्रिय भागीदारी अपेक्षित होती है। महिला सशक्तीकरण इसी व्यापक लोकतांत्रिक प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है, विशेषकर राजनीतिक सहभागिता के संदर्भ में, जहाँ महिलाओं की भूमिका समाज की दिशा और दशा तय करने में निर्णायक सिद्ध हो सकती है।

भारतीय संविधान ने महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किए हैं। मतदान का अधिकार, चुनाव लड़ने की स्वतंत्रता और समान अवसर संविधान की मूल आत्मा में निहित हैं। स्वतंत्रता के बाद से महिलाओं ने लोकतांत्रिक प्रक्रिया में निरंतर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। भारत में महिला मतदाताओं की संख्या में लगातार वृद्धि हुई है और कई चुनावों में महिला मतदान प्रतिशत पुरुषों से अधिक रहा है। यह स्थिति इस बात का संकेत है कि महिलाएँ अब केवल लोकतंत्र की मूक दर्शक नहीं, बल्कि उसकी सक्रिय सहभागी बन चुकी हैं।

राजनीतिक सहभागिता का पहला और सबसे महत्वपूर्ण रूप मतदान है। आज ग्रामीण से लेकर शहरी क्षेत्रों तक महिलाएँ मतदान के अधिकार को लेकर अधिक सजग हुई हैं। विशेष रूप से बिहार, केरल और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में महिला मतदाताओं की सक्रियता लोकतंत्र को नई ऊर्जा प्रदान कर रही है। महिला मतदान न केवल संख्या बढ़ाता है, बल्कि राजनीति में सामाजिक मुद्दों—जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण—को केंद्र में लाने में भी सहायक होता है।

राजनीतिक सहभागिता का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम प्रतिनिधित्व है। इस क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति मिश्रित कही जा सकती है। पंचायत राज व्यवस्था में महिलाओं के लिए आरक्षण ने एक ऐतिहासिक परिवर्तन लाया है। ग्राम पंचायतों, पंचायत समितियों और जिला परिषदों में महिलाओं की भागीदारी ने यह सिद्ध किया है कि अवसर मिलने पर महिलाएँ प्रभावी नेतृत्व कर सकती हैं। कई राज्यों में 50 प्रतिशत आरक्षण ने महिला नेतृत्व को संस्थागत रूप प्रदान किया है। इससे न केवल महिलाओं का आत्मविश्वास बढ़ा है, बल्कि स्थानीय शासन अधिक समावेशी और संवेदनशील भी बना है।

हालाँकि, राज्य विधानसभाओं और संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व अभी भी अपेक्षाकृत कम है। लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में महिलाओं की संख्या वैश्विक औसत से भी कम बनी हुई है। यह स्थिति दर्शाती है कि राजनीतिक सत्ता के उच्च स्तर पर महिलाओं की पहुँच में अब भी संरचनात्मक और सामाजिक बाधाएँ मौजूद हैं। पितृसत्तात्मक सोच, राजनीतिक दलों में टिकट वितरण में असमानता, आर्थिक संसाधनों की कमी और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ महिलाओं की राजनीतिक प्रगति में प्रमुख अवरोध बने हुए हैं।

इस संदर्भ में महिला आरक्षण विधेयक की चर्चा अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। यह विधेयक संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान करता है। समर्थकों का मानना है कि इससे महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी में गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों प्रकार की वृद्धि होगी, जबकि आलोचक इसे अवसर की समानता के विरुद्ध मानते हैं। किंतु यह तथ्य निर्विवाद है कि बिना संरचनात्मक समर्थन के महिलाओं की भागीदारी स्वतः समान स्तर तक नहीं पहुँच सकती। इस संदर्भ में यह कथन सार्थक प्रतीत होता है—
"समानता की शुरुआत अवसर देने से होती है, केवल प्रतीक्षा से नहीं।"

राजनीतिक दलों की भूमिका महिला सशक्तीकरण में अत्यंत निर्णायक है। कई दलों ने महिला मोर्चा या महिला शाखाएँ तो बनाई हैं, किंतु निर्णय-निर्माण के वास्तविक केंद्रों में महिलाओं की उपस्थिति सीमित है। जब तक राजनीतिक दल आंतरिक लोकतंत्र को मजबूत नहीं करेंगे और महिलाओं को नेतृत्व की वास्तविक भूमिका नहीं देंगे, तब तक राजनीतिक सहभागिता अधूरी बनी रहेगी।

शिक्षा और सामाजिक जागरूकता ने महिला राजनीतिक सहभागिता को नई दिशा दी है। शिक्षित और जागरूक महिलाएँ न केवल मतदान करती हैं, बल्कि राजनीतिक मुद्दों पर प्रश्न भी उठाती हैं। वे नीति-निर्माण में पारदर्शिता, जवाबदेही और संवेदनशीलता की माँग करती हैं। यह लोकतंत्र के परिपक्व होने का संकेत है। साथ ही, मीडिया और सोशल मीडिया ने महिलाओं को अपनी बात रखने का मंच दिया है, जिससे राजनीतिक विमर्श में उनकी आवाज़ अधिक मुखर हुई है।

हाल के वर्षों में भारतीय राजनीति में कुछ महिला नेताओं का उभार प्रेरणादायक रहा है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि महिला नेतृत्व न केवल सक्षम है, बल्कि कई मामलों में अधिक समावेशी और दूरदर्शी भी है। यह अनुभव इस धारणा को चुनौती देता है कि राजनीति केवल पुरुषों का क्षेत्र है। इसी संदर्भ में यह कथन अत्यंत प्रासंगिक है—
"जब महिलाएँ राजनीति में आती हैं, तो राजनीति की प्राथमिकताएँ बदल जाती हैं।"

फिर भी, यह स्वीकार करना होगा कि महिला सशक्तीकरण की राह में चुनौतियाँ अभी समाप्त नहीं हुई हैं। राजनीति में अपराधीकरण, धनबल और बाहुबल जैसी समस्याएँ महिलाओं के लिए अधिक जोखिमपूर्ण वातावरण बनाती हैं। साथ ही, सामाजिक पूर्वाग्रह और मीडिया की पक्षपाती दृष्टि भी महिला नेताओं को कठोर आलोचना के दायरे में ले आती है। इन समस्याओं का समाधान केवल कानूनी प्रावधानों से नहीं, बल्कि सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन से संभव है।

अंततः भारतीय लोकतंत्र में महिला सशक्तीकरण की वर्तमान स्थिति प्रगति और चुनौतियों का मिश्रण है। जमीनी स्तर पर महिलाओं की सहभागिता मजबूत हुई है, लेकिन उच्च राजनीतिक स्तर पर अभी भी लंबा रास्ता तय करना शेष है। यदि भारतीय लोकतंत्र को वास्तव में समावेशी और सशक्त बनाना है, तो महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता को मात्र औपचारिक नहीं, बल्कि प्रभावी बनाना होगा।

इस संदर्भ में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि लोकतंत्र की गुणवत्ता का मूल्यांकन इस बात से किया जा सकता है कि वह अपने निर्णय-निर्माण में महिलाओं को कितनी गंभीरता से स्थान देता है। इसी भाव के साथ यह पंक्ति इस निबंध को सार्थक रूप से पूर्ण करती है—
"जब भारतीय लोकतंत्र में महिलाओं की आवाज़ समान रूप से गूँजेगी, तभी लोकतंत्र अपने पूर्ण अर्थ में जीवंत और सशक्त होगा।"

## 2. 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा : भारत जैसे विविध लोकतंत्र में संभावनाएँ और चुनौतियाँ

"लोकतंत्र केवल चुनाव कराने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि जनकल्याण और जवाबदेही की सतत व्यवस्था है।" — डॉ. भीमराव अंबेडकर।
यह कथन भारतीय लोकतंत्र की आत्मा को स्पष्ट करता है और 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा को समझने की उचित पृष्ठभूमि प्रदान करता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जहाँ लोकसभा, राज्य विधानसभाएँ, पंचायत और नगर निकायों के चुनाव अलग-अलग समय पर होते रहते हैं। इसी निरंतर चुनावी प्रक्रिया के बीच 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा सामने आई है, जिसका उद्देश्य लोकसभा और सभी राज्य विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराना है। यह विचार प्रशासनिक दक्षता, आर्थिक बचत और नीति-निरंतरता से जुड़ा हुआ है, किंतु भारत जैसे विविध, संघीय और बहुस्तरीय लोकतंत्र में यह अवधारणा कई संभावनाओं के साथ गंभीर चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती है।

वर्तमान व्यवस्था में भारत लगभग हर वर्ष किसी न किसी राज्य में चुनाव की प्रक्रिया से गुजरता है। चुनावों के दौरान आदर्श आचार संहिता लागू हो जाती है, जिससे विकास कार्यों की गति धीमी पड़ जाती है। प्रशासनिक तंत्र चुनावी व्यवस्थाओं में व्यस्त हो जाता है और राजनीतिक नेतृत्व दीर्घकालिक नीतियों के बजाय अल्पकालिक लोकलुभावन घोषणाओं पर केंद्रित हो जाता है। 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा का प्रमुख तर्क यही है कि यदि चुनाव एक साथ कराए जाएँ, तो शासन व्यवस्था को स्थिरता मिलेगी और सरकारें पूरे कार्यकाल में विकासात्मक नीतियों पर ध्यान केंद्रित कर सकेंगी।

इस अवधारणा की एक बड़ी संभावना आर्थिक दृष्टि से जुड़ी हुई है। भारत में प्रत्येक चुनाव पर हजारों करोड़ रुपये खर्च होते हैं। सुरक्षा बलों की तैनाती, चुनाव कर्मियों की व्यवस्था, ईवीएम, परिवहन और प्रशासनिक संसाधनों पर भारी व्यय होता है। यदि चुनाव एक साथ हों, तो इन खर्चों में उल्लेखनीय कमी लाई जा सकती है। नीति आयोग ने भी संकेत दिया है कि बार-बार चुनाव होने से न केवल सरकारी खर्च बढ़ता है, बल्कि विकास योजनाओं की लागत भी अप्रत्यक्ष रूप से बढ़ जाती है। इस संदर्भ में यह कथन उल्लेखनीय

है—
"बार-बार होने वाले चुनाव शासन को अल्पकालिक सोच की ओर धकेल देते हैं।" — नीति आयोग।

'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा शासन की गुणवत्ता सुधारने की संभावना भी प्रस्तुत करती है। एक साथ चुनाव होने पर सरकारों को पूरे पाँच वर्षों का अपेक्षाकृत स्थिर कार्यकाल मिलेगा। इससे नीति-निरंतरता बनी रहेगी और सुधारात्मक निर्णय लेने में राजनीतिक संकोच कम होगा। साथ ही, प्रशासनिक मशीनरी पर बार-बार पड़ने वाला चुनावी दबाव घटेगा, जिससे सरकारी सेवाओं की दक्षता बढ़ सकती है।

हालाँकि, भारत जैसे विविध लोकतंत्र में इस अवधारणा से जुड़ी चुनौतियाँ भी उतनी ही गहन हैं। भारत का संघीय ढाँचा राज्यों को पर्याप्त राजनीतिक और प्रशासनिक स्वायत्तता प्रदान करता है। राज्यों की सामाजिक संरचना, राजनीतिक मुद्दे और विकास की प्राथमिकताएँ अलग-अलग हैं। यदि लोकसभा और विधानसभा चुनाव एक साथ कराए जाते हैं, तो यह आशंका रहती है कि राष्ट्रीय मुद्दे राज्य स्तरीय मुद्दों पर हावी हो सकते हैं। इससे क्षेत्रीय दलों और स्थानीय समस्याओं को पर्याप्त महत्व न मिल पाने का खतरा उत्पन्न होता है, जो संघीय भावना के विपरीत है।

संवैधानिक दृष्टि से भी 'एक देश–एक चुनाव' एक जटिल विषय है। वर्तमान संविधान के अंतर्गत लोकसभा और विधानसभाओं के कार्यकाल स्वतंत्र हैं। किसी सरकार के गिरने, विश्वास मत हारने या विधानसभा भंग होने की स्थिति में समय से पहले चुनाव कराना आवश्यक होता है। ऐसे में एक साथ चुनाव सुनिश्चित करने के लिए संविधान में व्यापक संशोधन, कार्यकाल में परिवर्तन और वैकल्पिक शासन व्यवस्था जैसे प्रावधान करने होंगे। यह प्रक्रिया न केवल तकनीकी रूप से कठिन है, बल्कि इसके लिए व्यापक राजनीतिक सहमति भी आवश्यक होगी।

लोकतांत्रिक विविधता के संदर्भ में यह प्रश्न भी महत्वपूर्ण है कि क्या मतदाता एक साथ इतने स्तरों पर सरकारों का मूल्यांकन प्रभावी ढंग से कर पाएगा। भारत में चुनाव केवल सत्ता परिवर्तन का माध्यम नहीं, बल्कि सरकार के प्रदर्शन पर जनमत व्यक्त करने का अवसर भी होते हैं। अलग-अलग समय पर चुनाव होने से मतदाता केंद्र और राज्य सरकारों के कामकाज का स्वतंत्र मूल्यांकन कर सकता है। एक साथ चुनाव होने पर यह प्रक्रिया अधिक जटिल हो सकती है।

प्रशासनिक और सुरक्षा व्यवस्था की दृष्टि से भी चुनौतियाँ कम नहीं हैं। एक साथ पूरे देश में चुनाव कराना सुरक्षा बलों, चुनाव कर्मियों और लॉजिस्टिक संसाधनों पर अत्यधिक दबाव डालेगा। किसी भी स्तर पर चूक लोकतांत्रिक प्रक्रिया की विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकती है।

राजनीतिक दृष्टिकोण से भी 'एक देश–एक चुनाव' पर मतभेद स्पष्ट हैं। कुछ राजनीतिक दल इसे सुशासन और सुधार की दिशा में कदम मानते हैं, जबकि अन्य इसे लोकतांत्रिक संतुलन और संघीय ढाँचे के लिए खतरा बताते हैं। प्रसिद्ध संवैधानिक विद्वान ग्रानविल ऑस्टिन का कथन यहाँ प्रासंगिक है—
"लोकतंत्र में सुधार तभी सफल होता है, जब वह राजनीतिक विविधता और संघीय संतुलन का सम्मान करे।" — ग्रानविल ऑस्टिन।

यह भी उल्लेखनीय है कि भारत में स्वतंत्रता के बाद प्रारंभिक वर्षों में लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ होते थे। किंतु राजनीतिक अस्थिरता और सरकारों के गिरने के कारण यह व्यवस्था टूट गई। आज की परिस्थितियाँ उस समय से भिन्न हैं, इसलिए अतीत के अनुभवों को वर्तमान संदर्भ में संतुलित दृष्टि से देखना आवश्यक है।

अंततः 'एक देश–एक चुनाव' की अवधारणा में अनेक संभावनाएँ निहित हैं—जैसे आर्थिक बचत, प्रशासनिक दक्षता और नीति-निरंतरता—लेकिन भारत जैसे विविध, संघीय और बहुलतावादी लोकतंत्र में इसकी चुनौतियाँ भी गंभीर हैं। इस विषय पर कोई भी निर्णय लेते समय लोकतांत्रिक मूल्यों, संघीय संरचना और जनभागीदारी को सर्वोपरि रखना होगा।

यदि इस अवधारणा को लागू करना है, तो इसे चरणबद्ध, सहमति-आधारित और संवैधानिक रूप से संतुलित तरीके से लागू करना आवश्यक होगा। अन्यथा यह सुधार लोकतंत्र को सशक्त करने के बजाय उसकी जड़ों को कमजोर कर सकता है। इसी भाव के साथ यह कथन इस निबंध को सार्थक रूप से पूर्ण करता है—
"लोकतंत्र में सुधार का अर्थ सरलीकरण नहीं, बल्कि संतुलन स्थापित करना है।" — अमर्त्य सेन।

## 3. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता : लोकतंत्र की आत्मा और उसकी संवैधानिक सीमाएँ

"यदि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबा दिया जाए, तो लोकतंत्र केवल एक औपचारिक ढाँचा बनकर रह जाता है।" — जॉन स्टुअर्ट मिल।
यह कथन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के महत्व को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की आधारशिला होती है, क्योंकि यही वह माध्यम है जिसके द्वारा नागरिक अपने विचार, भावनाएँ, असहमति और अपेक्षाएँ शासन के समक्ष रख पाते हैं। भारत जैसे विशाल, विविध और बहुलतावादी लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता न केवल एक मौलिक अधिकार है, बल्कि लोकतंत्र की जीवंतता और उत्तरदायित्व का भी प्रमाण है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(a) के अंतर्गत नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्रदान की गई है। यह स्वतंत्रता व्यक्ति को बोलने, लिखने, विचार प्रकट करने, प्रेस, कला, साहित्य और अन्य माध्यमों से अपने मत व्यक्त करने का अधिकार देती है। यह अधिकार नागरिकों को सत्ता के कार्यों की आलोचना करने, नीतियों पर प्रश्न उठाने और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठाने का अवसर देता है। इसी कारण अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को लोकतंत्र की आत्मा कहा जाता है, क्योंकि इसके बिना लोकतंत्र केवल चुनावों तक सीमित रह जाएगा।

लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का सबसे बड़ा योगदान यह है कि यह सत्ता को जवाबदेह बनाती है। स्वतंत्र प्रेस, जागरूक नागरिक और सक्रिय सामाजिक विमर्श सरकार की नीतियों और निर्णयों की निगरानी करते हैं। जब नागरिक निर्भीक होकर अपनी बात रख पाते हैं, तब शासन तंत्र अधिक पारदर्शी और संवेदनशील बनता है। इस संदर्भ में डॉ. भीमराव अंबेडकर का कथन अत्यंत प्रासंगिक है—
"संविधान केवल शासन का दस्तावेज नहीं, बल्कि जनता की आवाज़ का संरक्षण भी है।" — डॉ. बी. आर. अंबेडकर।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सामाजिक परिवर्तन का भी एक सशक्त माध्यम रही है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर सामाजिक सुधार आंदोलनों तक, विचारों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति ने जनचेतना को जाग्रत किया है। साहित्य, कला और मीडिया ने समाज की विसंगतियों को उजागर किया और सुधार की दिशा में मार्ग प्रशस्त किया। इस प्रकार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता केवल व्यक्तिगत अधिकार नहीं, बल्कि सामूहिक प्रगति का साधन भी है।

हालाँकि, कोई भी स्वतंत्रता निरंकुश नहीं हो सकती। समाज में विविध हित, संवेदनाएँ और अधिकार होते हैं, जिनके बीच संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। इसी कारण भारतीय संविधान ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर कुछ युक्तिसंगत प्रतिबंध भी लगाए हैं। अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत राज्य को यह अधिकार है कि वह सार्वजनिक व्यवस्था, राज्य की सुरक्षा, नैतिकता, शालीनता, न्यायालय की अवमानना, मानहानि और भारत की संप्रभुता व अखंडता के हित में इस स्वतंत्रता पर सीमाएँ निर्धारित कर सके।

इन संवैधानिक सीमाओं का उद्देश्य अभिव्यक्ति को दबाना नहीं, बल्कि उसे उत्तरदायित्वपूर्ण बनाना है। यदि अभिव्यक्ति के नाम पर हिंसा, घृणा, विद्वेष या अस्थिरता फैलाई जाए, तो वह लोकतंत्र को सशक्त करने के बजाय कमजोर करती है। इसलिए अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सामाजिक जिम्मेदारी के बीच संतुलन अनिवार्य है। इस संदर्भ में महात्मा गांधी का यह कथन विचारणीय है—
"स्वतंत्रता का अर्थ यह नहीं कि हम दूसरों की स्वतंत्रता का हनन करें।" — महात्मा गांधी।

आधुनिक समय में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। डिजिटल मीडिया और सोशल मीडिया ने विचारों को अभिव्यक्त करने के मंच तो व्यापक रूप से उपलब्ध कराए हैं, लेकिन इसके साथ ही झूठी सूचनाएँ, घृणास्पद भाषण और अफवाहें भी तेजी से फैल रही हैं। ऐसे में यह प्रश्न उठता है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सामाजिक शांति के बीच संतुलन कैसे बनाया जाए। यह संतुलन केवल कानूनी प्रावधानों से नहीं, बल्कि नागरिक चेतना और नैतिक जिम्मेदारी से भी संभव है।

न्यायपालिका ने समय-समय पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और उसकी सीमाओं के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया है। न्यायालयों ने यह स्पष्ट किया है कि असहमति और आलोचना लोकतंत्र का अभिन्न अंग हैं, लेकिन वे मर्यादा और कानून के दायरे में होनी चाहिए। न्यायिक व्याख्याओं ने इस अधिकार को संरक्षित भी किया है और उसके दुरुपयोग को नियंत्रित भी।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का वास्तविक मूल्य तभी है जब वह कमजोर और हाशिए पर खड़े वर्गों की आवाज़ बन सके। यदि यह स्वतंत्रता केवल शक्तिशाली वर्गों तक सीमित रह जाए, तो लोकतंत्र का उद्देश्य अधूरा रह जाता है। इसलिए राज्य और समाज दोनों का दायित्व है कि वे ऐसी परिस्थितियाँ बनाएँ जहाँ हर नागरिक निर्भीक होकर अपनी बात कह सके।

अंततः यह कहा जा सकता है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतंत्र की आत्मा है, लेकिन उसकी संवैधानिक सीमाएँ लोकतंत्र की सुरक्षा कवच हैं। स्वतंत्रता और अनुशासन, अधिकार और उत्तरदायित्व—इनके बीच संतुलन ही लोकतांत्रिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाता है। यदि अभिव्यक्ति पूरी तरह बंधी होगी, तो लोकतंत्र निष्प्राण हो जाएगा, और यदि वह पूरी तरह निरंकुश होगी, तो अराजकता जन्म लेगी।

इसी संतुलन को रेखांकित करते हुए यह कथन इस निबंध को पूर्ण करता है—
"सच्चा लोकतंत्र वही है, जहाँ विचार स्वतंत्र हों, लेकिन समाज सुरक्षित।" — अमर्त्य सेन।

## 4. अमृतकाल की अवधारणा : सुशासन और विकसित भारत की ओर यात्रा

"कोई भी राष्ट्र अपने वर्तमान से नहीं, बल्कि अपने भविष्य की दृष्टि से महान बनता है।" — डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम।
यह कथन 'अमृतकाल' की अवधारणा की मूल भावना को स्पष्ट करता है। आज़ादी के 75 वर्ष पूर्ण होने के बाद भारत ने अपने विकास की यात्रा में एक नए चरण में प्रवेश किया है, जिसे 'अमृतकाल' कहा गया है। यह कालखंड केवल समय की गणना नहीं, बल्कि भारत के लिए आत्ममंथन, संकल्प और दीर्घकालिक लक्ष्य निर्धारण का दौर है। अमृतकाल का उद्देश्य भारत को एक सशक्त, समावेशी, आत्मनिर्भर और विकसित राष्ट्र के रूप में स्थापित करना है, जिसकी आधारशिला सुशासन पर टिकी हुई है।

अमृतकाल की अवधारणा भारत के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक राष्ट्र-निर्माण की यात्रा को जोड़ती है। यह कालखंड अतीत की उपलब्धियों का मूल्यांकन करते हुए भविष्य की दिशा तय करता है। विकसित भारत की कल्पना केवल आर्थिक समृद्धि तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें सामाजिक न्याय, पर्यावरणीय संतुलन, तकनीकी नवाचार और मानव विकास जैसे आयाम भी शामिल हैं। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सुशासन को केंद्रीय तत्व माना गया है, क्योंकि बिना प्रभावी, पारदर्शी और उत्तरदायी शासन के कोई भी विकास टिकाऊ नहीं हो सकता।

सुशासन का अर्थ है—ऐसा शासन जिसमें निर्णय जनहित में हों, प्रशासन जवाबदेह हो और नीतियाँ समावेशी हों। अमृतकाल में सुशासन को केवल प्रशासनिक सुधार तक सीमित नहीं रखा गया है, बल्कि इसे नागरिकों की भागीदारी, तकनीक के उपयोग और पारदर्शिता से जोड़ा गया है। डिजिटल गवर्नेंस, ई-सेवाएँ, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण और भ्रष्टाचार पर नियंत्रण जैसे प्रयास सुशासन को मजबूत करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम हैं। इसी संदर्भ में यह कथन प्रासंगिक प्रतीत होता है—
"अच्छा शासन वही है, जिसमें सत्ता जनता की सेवा का माध्यम बने, न कि प्रभुत्व का।" — महात्मा गांधी।

अमृतकाल की यात्रा में आर्थिक विकास की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। विकसित भारत की परिकल्पना एक ऐसी अर्थव्यवस्था की है, जो न केवल तेज़ी से बढ़े, बल्कि समावेशी भी हो। आत्मनिर्भर भारत, मेक इन इंडिया, स्टार्टअप इंडिया और स्किल इंडिया जैसी पहलें इसी दिशा में प्रयास हैं। इनका उद्देश्य उत्पादन क्षमता बढ़ाना, रोजगार सृजन करना और वैश्विक प्रतिस्पर्धा में भारत की स्थिति मजबूत करना है। आर्थिक विकास तभी सार्थक होगा जब उसका लाभ समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे।

सुशासन और विकसित भारत की यात्रा में सामाजिक न्याय और समावेशन भी उतने ही आवश्यक हैं। अमृतकाल का अर्थ तभी पूर्ण होगा जब विकास का लाभ सभी वर्गों—महिलाओं, किसानों, श्रमिकों, युवाओं और वंचित समुदायों—तक समान रूप से पहुँचे। शिक्षा, स्वास्थ्य और पोषण जैसे क्षेत्रों में निवेश मानव पूँजी को सुदृढ़ करता है और दीर्घकालिक विकास की नींव रखता है। इस संदर्भ में डॉ. भीमराव अंबेडकर का विचार उल्लेखनीय है—
"राजनीतिक लोकतंत्र तब तक स्थायी नहीं हो सकता, जब तक सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र उसे आधार न दें।" — डॉ. बी. आर. अंबेडकर।

अमृतकाल की अवधारणा में तकनीक और नवाचार को भी विशेष महत्व दिया गया है। डिजिटल इंडिया, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डेटा-आधारित शासन और स्मार्ट अवसंरचना सुशासन को अधिक प्रभावी बना रहे हैं। तकनीक न केवल सेवाओं की पहुँच बढ़ाती है, बल्कि प्रशासनिक दक्षता और पारदर्शिता को भी सुदृढ़ करती है। इससे नागरिक और सरकार के बीच विश्वास का संबंध मजबूत होता है, जो किसी भी लोकतंत्र के लिए अनिवार्य है।

पर्यावरणीय दृष्टि से भी अमृतकाल का लक्ष्य संतुलित विकास है। विकसित भारत की यात्रा केवल औद्योगीकरण और शहरीकरण तक सीमित नहीं हो सकती। जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और अक्षय ऊर्जा का विस्तार इस यात्रा के आवश्यक घटक हैं। सतत विकास के बिना विकास की कोई भी अवधारणा अधूरी मानी जाएगी।

हालाँकि, अमृतकाल की यात्रा चुनौतियों से भी मुक्त नहीं है। सामाजिक असमानता, क्षेत्रीय विषमता, बेरोजगारी, प्रशासनिक जटिलताएँ और वैश्विक अनिश्चितताएँ इस मार्ग में बाधाएँ उत्पन्न कर सकती हैं। इन चुनौतियों से निपटने के लिए केवल सरकारी प्रयास पर्याप्त नहीं होंगे, बल्कि नागरिकों की सक्रिय भागीदारी भी आवश्यक है। अमृतकाल का मूल संदेश यही है कि राष्ट्र निर्माण केवल सरकार का नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक का साझा दायित्व है।

लोकतांत्रिक सहभागिता अमृतकाल की आत्मा है। जब नागरिक नीति निर्माण, स्थानीय शासन और सामाजिक पहल में भाग लेते हैं, तब सुशासन केवल एक अवधारणा नहीं, बल्कि व्यवहारिक वास्तविकता बन जाता है। इस संदर्भ में यह कथन अत्यंत सार्थक प्रतीत होता है—
"राष्ट्र का भविष्य उसके नागरिकों की चेतना और सहभागिता पर निर्भर करता है।" — जवाहरलाल नेहरू।

अंततः अमृतकाल की अवधारणा भारत के लिए एक ऐतिहासिक अवसर है। यह कालखंड भारत को केवल आर्थिक रूप से नहीं, बल्कि नैतिक, सामाजिक और लोकतांत्रिक रूप से भी सशक्त बनाने का अवसर प्रदान करता है। सुशासन इस यात्रा का मार्गदर्शक है और विकसित भारत इसका लक्ष्य। यदि नीति, प्रशासन और नागरिक चेतना एक साथ समन्वित होकर कार्य करें, तो अमृतकाल भारत को नई ऊँचाइयों तक ले जा सकता है।

इसी आशा और विश्वास के साथ यह विचार इस निबंध को पूर्ण करता है—
"जब सुशासन और जनभागीदारी साथ चलते हैं, तब राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल बनता है।" — अटल बिहारी वाजपेयी।

## 5. आरक्षण नीति : सामाजिक न्याय की उपलब्धि या नए विवादों का कारण

"सामाजिक न्याय का अर्थ केवल समान अवसर नहीं, बल्कि ऐतिहासिक अन्याय की भरपाई भी है।" — डॉ. भीमराव अंबेडकर।
यह कथन भारतीय आरक्षण नीति की आत्मा को स्पष्ट करता है। भारत एक ऐसा समाज है जहाँ सदियों तक जाति, वर्ग और लिंग के आधार पर असमानताएँ व्याप्त रहीं। स्वतंत्रता के बाद संविधान निर्माताओं के सामने सबसे बड़ी चुनौती यह थी कि राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक न्याय कैसे सुनिश्चित किया जाए। इसी पृष्ठभूमि में आरक्षण नीति को एक संवैधानिक उपाय के रूप में अपनाया गया, ताकि वंचित और पिछड़े वर्गों को मुख्यधारा में लाया जा सके। किंतु समय के साथ यह नीति केवल सामाजिक न्याय की उपलब्धि भर नहीं रही, बल्कि नए विवादों और बहसों का विषय भी बन गई है।

आरक्षण नीति का मूल उद्देश्य समाज के उन वर्गों को अवसर प्रदान करना था, जिन्हें ऐतिहासिक रूप से शिक्षा, रोजगार और सत्ता से वंचित रखा गया। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण का प्रावधान इसी सोच का परिणाम था। यह नीति समानता के सिद्धांत को व्यवहारिक रूप देती है, क्योंकि समानता का अर्थ सभी को एक समान स्थिति में रखना नहीं, बल्कि असमान परिस्थितियों वाले लोगों को समान स्तर तक पहुँचने का अवसर देना है। इस दृष्टि से आरक्षण नीति सामाजिक न्याय की दिशा में एक ऐतिहासिक उपलब्धि मानी जा सकती है।

आरक्षण के माध्यम से शिक्षा और सरकारी सेवाओं में वंचित वर्गों की भागीदारी बढ़ी है। उच्च शिक्षा संस्थानों, प्रशासन, न्यायपालिका और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में इन वर्गों की उपस्थिति ने सामाजिक संरचना को अधिक समावेशी बनाया है। इससे न केवल व्यक्तिगत स्तर पर सामाजिक गतिशीलता बढ़ी है, बल्कि समाज में आत्मसम्मान और समानता की भावना भी मजबूत हुई है। यह आरक्षण नीति की एक सकारात्मक उपलब्धि है, जिसे नकारा नहीं जा सकता।

हालाँकि, आरक्षण नीति के साथ कई विवाद भी जुड़े हुए हैं। समय के साथ यह प्रश्न उठने लगा है कि क्या आरक्षण अपने मूल उद्देश्य को पूरी तरह पूरा कर पाया है या नहीं। आलोचकों का तर्क है कि आरक्षण का लाभ अक्सर उन्हीं वर्गों के अपेक्षाकृत संपन्न लोगों तक सीमित रह जाता है, जबकि वास्तविक रूप से वंचित व्यक्ति अब भी पीछे छूट जाते हैं। इस संदर्भ में 'क्रीमी लेयर' की अवधारणा सामने आई, जिसने यह स्पष्ट किया कि सामाजिक न्याय के लिए आरक्षण को अधिक लक्षित और संतुलित बनाना आवश्यक है।

आरक्षण नीति को लेकर एक और बड़ा विवाद मेरिट बनाम आरक्षण का है। यह तर्क दिया जाता है कि आरक्षण से योग्यता और प्रतिस्पर्धा प्रभावित होती है। हालाँकि, यह तर्क तभी तक सही प्रतीत होता है जब योग्यता को सामाजिक संदर्भ से अलग करके देखा जाए। योग्यता स्वयं सामाजिक अवसरों, शिक्षा और संसाधनों की उपलब्धता से प्रभावित होती है। इस संदर्भ में यह कथन विचारणीय है—

"बराबरी की दौड़ में वही आगे बढ़ता है, जिसे शुरुआत में बेहतर रास्ता मिला हो।" — अमर्त्य सेन।
यह उद्धरण दर्शाता है कि आरक्षण योग्यता के विरोध में नहीं, बल्कि समान अवसर सुनिश्चित करने का माध्यम है।

फिर भी, यह भी सत्य है कि आरक्षण नीति ने समाज में नए प्रकार के तनाव और असंतोष को जन्म दिया है। कई बार यह जातिगत पहचान को और मजबूत करता प्रतीत होता है, जिससे सामाजिक एकता प्रभावित हो सकती है। इसके अतिरिक्त, आरक्षण की मांग अब केवल सामाजिक पिछड़ेपन तक सीमित नहीं रही, बल्कि आर्थिक आधार पर भी आरक्षण की माँग बढ़ी है। आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए आरक्षण का प्रावधान इसी बदलती सामाजिक वास्तविकता का संकेत है, जिसने आरक्षण नीति की दिशा को और जटिल बना दिया है।

राजनीतिक दृष्टि से भी आरक्षण एक संवेदनशील विषय बन गया है। राजनीतिक दलों द्वारा इसे वोट बैंक की राजनीति के लिए प्रयोग किए जाने के आरोप लगते रहे हैं। जब आरक्षण नीति सामाजिक न्याय के बजाय राजनीतिक लाभ का साधन बन जाती है, तब इसके प्रति समाज में अविश्वास बढ़ता है। इस संदर्भ में यह कथन प्रासंगिक प्रतीत होता है—
"सामाजिक न्याय का सबसे बड़ा शत्रु उसका राजनीतिक दुरुपयोग है।" — राममनोहर लोहिया।

संवैधानिक रूप से आरक्षण नीति को समय-समय पर न्यायपालिका द्वारा संतुलित करने का प्रयास किया गया है। 50 प्रतिशत की सीमा, क्रीमी लेयर की अवधारणा और युक्तिसंगत वर्गीकरण जैसे निर्णय इस बात का प्रमाण हैं कि आरक्षण को स्थायी समाधान नहीं, बल्कि एक अस्थायी सुधारात्मक उपाय के रूप में देखा गया है। इसका उद्देश्य समाज को स्थायी रूप से वर्गीकृत करना नहीं, बल्कि एक ऐसे स्तर तक पहुँचाना है जहाँ आरक्षण की आवश्यकता स्वयं समाप्त हो जाए।

आरक्षण नीति का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि हम इसे किस दृष्टिकोण से देखते हैं। यदि इसे केवल अधिकार के रूप में देखा गया, तो यह नए विवादों को जन्म देता रहेगा। किंतु यदि इसे सामाजिक न्याय की एक साधनात्मक व्यवस्था के रूप में समझा जाए, तो इसे समय, आवश्यकता और सामाजिक बदलाव के अनुसार संशोधित किया जा सकता है। शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, प्राथमिक स्तर पर समान अवसर, और सामाजिक जागरूकता आरक्षण पर निर्भरता को धीरे-धीरे कम कर सकते हैं।

अंततः यह कहा जा सकता है कि आरक्षण नीति न तो पूर्णतः सामाजिक न्याय की अंतिम उपलब्धि है और न ही केवल विवादों का कारण। यह एक संक्रमणकालीन व्यवस्था है, जिसने समाज को अधिक समावेशी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन इसके साथ नई चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। इसका वास्तविक मूल्यांकन इसके उद्देश्य, क्रियान्वयन और समयानुकूल सुधारों के आधार पर ही किया जा सकता है।

इसी संतुलित दृष्टिकोण के साथ यह विचार इस निबंध को पूर्ण करता है—
"आरक्षण का उद्देश्य समाज को बाँटना नहीं, बल्कि उसे समानता की दिशा में एकजुट करना है।" — डॉ. भीमराव अंबेडकर।

## 6. ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन : पारदर्शिता एवं दक्षता की नई संभावनाएँ

"प्रौद्योगिकी का वास्तविक मूल्य तब प्रकट होता है, जब वह शासन को जनता के और अधिक निकट ले आए।" — डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम।
यह कथन ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन की मूल भावना को स्पष्ट करता है। इक्कीसवीं सदी में शासन की अवधारणा तेजी से बदल रही है। पारंपरिक प्रशासनिक व्यवस्थाएँ, जो कागज़ी प्रक्रियाओं, लंबी फाइलों और विलंब से ग्रस्त थीं, अब डिजिटल माध्यमों से प्रतिस्थापित हो रही हैं। ई-गवर्नेंस न केवल शासन की कार्यप्रणाली को आधुनिक बना रहा है, बल्कि लोकतंत्र को अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और नागरिक-केंद्रित बनाने की दिशा में नई संभावनाएँ भी प्रस्तुत कर रहा है।

ई-गवर्नेंस का तात्पर्य सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से सरकारी सेवाओं और प्रक्रियाओं को सरल, सुलभ और प्रभावी बनाना है। भारत जैसे विशाल और विविध देश में, जहाँ प्रशासनिक पहुँच और संसाधनों की असमानता लंबे समय से एक चुनौती रही है, डिजिटल प्रशासन ने शासन और नागरिकों के बीच की दूरी को कम किया है। ऑनलाइन पोर्टल, मोबाइल एप्लिकेशन और डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से नागरिक अब अपने अधिकारों और सेवाओं तक अधिक सहजता से पहुँच बना पा रहे हैं।

पारदर्शिता ई-गवर्नेंस की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि मानी जाती है। पारंपरिक प्रशासन में निर्णय प्रक्रिया अक्सर अपारदर्शी होती थी, जिससे भ्रष्टाचार और मनमानी की संभावनाएँ बनी रहती थीं। डिजिटल प्रशासन में सूचनाओं का डिजिटलीकरण और सार्वजनिक

उपलब्धता शासन को खुला बनाती है। ऑनलाइन टेंडर, ई-प्रोक्योरमेंट, सार्वजनिक डैशबोर्ड और सूचना पोर्टल नागरिकों को यह जानने का अधिकार देते हैं कि सरकार कैसे और कहाँ निर्णय ले रही है। इस संदर्भ में अमर्त्य सेन का कथन अत्यंत प्रासंगिक है—
"पारदर्शिता लोकतंत्र की वह रोशनी है, जो सत्ता के अंधकार को दूर करती है।" — अमर्त्य सेन।

ई-गवर्नेंस ने प्रशासनिक दक्षता में भी उल्लेखनीय सुधार किया है। डिजिटल प्रक्रियाओं के कारण फाइलों की गति बढ़ी है, निर्णय लेने में लगने वाला समय कम हुआ है और सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार आया है। ई-ऑफिस प्रणाली, ऑनलाइन शिकायत निवारण और समयबद्ध सेवा वितरण ने प्रशासन को अधिक परिणामोन्मुख बनाया है। इससे न केवल सरकारी मशीनरी पर दबाव कम हुआ है, बल्कि नागरिकों का भरोसा भी मजबूत हुआ है।

डिजिटल प्रशासन का एक महत्वपूर्ण पहलू नागरिक सहभागिता है। सोशल मीडिया, ऑनलाइन फीडबैक तंत्र और डिजिटल परामर्श मंचों के माध्यम से नागरिक अब नीति-निर्माण और शासन संवाद में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं। यह लोकतंत्र को केवल प्रतिनिधिक नहीं, बल्कि सहभागी भी बनाता है। जवाहरलाल नेहरू का यह कथन यहाँ सार्थक प्रतीत होता है—
"लोकतंत्र केवल शासन की व्यवस्था नहीं, बल्कि जनता की निरंतर भागीदारी की प्रक्रिया है।" — जवाहरलाल नेहरू।

भारत में डिजिटल इंडिया पहल ने ई-गवर्नेंस को व्यापक आधार प्रदान किया है। आधार, डिजिटल भुगतान, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण और ऑनलाइन प्रमाण-पत्र सेवाओं ने सरकारी योजनाओं की पहुँच अंतिम व्यक्ति तक सुनिश्चित की है। विशेष रूप से कल्याणकारी योजनाओं में डिजिटल माध्यमों के उपयोग से बिचौलियों की भूमिका घटी है और लाभार्थियों को सीधे लाभ मिला है। इससे सामाजिक न्याय और समावेशन को भी बल मिला है।

हालाँकि, ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन के समक्ष कुछ गंभीर चुनौतियाँ भी हैं। डिजिटल विभाजन एक प्रमुख समस्या है, जहाँ तकनीकी संसाधनों और डिजिटल साक्षरता की असमानता कुछ वर्गों को पीछे छोड़ सकती है। ग्रामीण क्षेत्रों, वृद्ध नागरिकों और वंचित वर्गों के लिए डिजिटल सेवाओं तक पहुँच अभी भी सीमित है। यदि इस अंतर को पाटा नहीं गया, तो डिजिटल प्रशासन समानता के बजाय असमानता को बढ़ा सकता है।

डेटा सुरक्षा और गोपनीयता भी डिजिटल शासन के महत्वपूर्ण प्रश्न हैं। नागरिकों का व्यक्तिगत और संवेदनशील डेटा डिजिटल रूप में संग्रहित किया जाता है। यदि इसकी सुरक्षा सुनिश्चित नहीं की गई, तो साइबर अपराध और दुरुपयोग का खतरा बढ़ सकता है। इसलिए ई-गवर्नेंस की सफलता केवल तकनीकी उन्नति पर नहीं, बल्कि मजबूत कानूनी ढाँचे, साइबर सुरक्षा और नैतिक प्रशासन पर भी निर्भर करती है।

ई-गवर्नेंस का उद्देश्य केवल प्रक्रियाओं का डिजिटलीकरण नहीं, बल्कि प्रशासनिक संस्कृति में परिवर्तन लाना है। जब तकनीक को संवेदनशीलता, उत्तरदायित्व और जनहित के साथ जोड़ा जाता है, तभी डिजिटल प्रशासन सार्थक बनता है। इस संदर्भ में पुनः डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम का विचार स्मरणीय है—
"तकनीक तब तक मूल्यवान नहीं होती, जब तक वह मानव जीवन को सरल और गरिमामय न बना दे।" — डॉ. ए. पी. जे. अब्दुल कलाम।

भविष्य की दृष्टि से ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन भारत के लिए अपार संभावनाएँ प्रस्तुत करते हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, डेटा एनालिटिक्स और स्मार्ट गवर्नेंस शासन को और अधिक सटीक तथा पूर्वानुमेय बना सकते हैं। यदि इन नवाचारों को नैतिकता, समावेशन और पारदर्शिता के सिद्धांतों के साथ अपनाया जाए, तो सुशासन केवल एक अवधारणा नहीं, बल्कि व्यवहारिक वास्तविकता बन सकता है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि ई-गवर्नेंस और डिजिटल प्रशासन पारदर्शिता एवं दक्षता की दिशा में एक ऐतिहासिक परिवर्तन हैं। यह शासन को आधुनिक बनाते हैं, नागरिकों को सशक्त करते हैं और लोकतंत्र को अधिक जीवंत बनाते हैं। किंतु इसकी सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि तकनीक को मानव-केंद्रित दृष्टिकोण के साथ कैसे अपनाया जाता है।

इसी आशा के साथ यह पंक्ति इस निबंध को पूर्ण करती है—
"जब तकनीक, पारदर्शिता और जनभागीदारी एक साथ चलती हैं, तब लोकतंत्र अपने सर्वोत्तम रूप में प्रकट होता है।" — अटल बिहारी वाजपेयी।

## 7. जाति आधारित जनगणना : सामाजिक समावेशन का माध्यम या राजनीतिक ध्रुवीकरण

"किसी भी समाज की वास्तविक पहचान तब सामने आती है, जब वह अपने सबसे कमजोर वर्ग को पहचानने और समझने का साहस करता है।" — डॉ. भीमराव अंबेडकर।
यह कथन जाति आधारित जनगणना के मूल उद्देश्य को समझने की स्पष्ट पृष्ठभूमि प्रदान करता है। भारत जैसे सामाजिक रूप से विविध और ऐतिहासिक असमानताओं से ग्रस्त देश में जाति केवल एक सामाजिक पहचान नहीं, बल्कि अवसरों, संसाधनों और सत्ता तक पहुँच का निर्धारक कारक भी रही है। ऐसे में जाति आधारित जनगणना का प्रश्न केवल आँकड़ों का नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, समावेशन और लोकतांत्रिक संतुलन से जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि यह विषय एक ओर सामाजिक समावेशन का माध्यम प्रतीत होता है, तो दूसरी ओर राजनीतिक ध्रुवीकरण की आशंका भी उत्पन्न करता है।

भारत में जाति आधारित जनगणना का ऐतिहासिक संदर्भ औपनिवेशिक काल से जुड़ा है, जब ब्रिटिश शासन ने जातिगत आँकड़े एकत्र किए थे। स्वतंत्रता के बाद संविधान निर्माताओं ने सामाजिक न्याय के उद्देश्य से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की गणना जारी रखी, लेकिन अन्य जातियों की गणना से परहेज किया गया। इसके पीछे यह आशंका थी कि जाति की औपचारिक पहचान कहीं सामाजिक एकता को कमजोर न कर दे। किंतु समय के साथ यह प्रश्न उठने लगा कि बिना प्रामाणिक आँकड़ों के सामाजिक न्याय की नीतियाँ कितनी प्रभावी हो सकती हैं।

जाति आधारित जनगणना के पक्ष में सबसे मजबूत तर्क सामाजिक समावेशन से जुड़ा है। किसी भी कल्याणकारी नीति के लिए लक्षित समूहों की वास्तविक स्थिति का ज्ञान आवश्यक होता है। यदि राज्य के पास यह स्पष्ट जानकारी ही न हो कि कौन-सा वर्ग कितनी संख्या में है और उसकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति क्या है, तो नीति-निर्माण अनुमान और धारणा के आधार पर ही होगा। जाति आधारित जनगणना वंचित वर्गों की वास्तविक स्थिति को सामने लाने में सहायक हो सकती है और शिक्षा, रोजगार तथा कल्याणकारी योजनाओं को अधिक प्रभावी और न्यायसंगत बना सकती है।

इसके अतिरिक्त, सामाजिक असमानता केवल गरीबी तक सीमित नहीं होती, बल्कि वह ऐतिहासिक बहिष्करण और भेदभाव से भी जुड़ी होती है। जाति आधारित जनगणना इस असमानता को मापने का एक उपकरण बन सकती है। इससे यह भी स्पष्ट हो सकता है कि आरक्षण और अन्य सकारात्मक भेदभाव की नीतियाँ किन वर्गों तक पहुँची हैं और किन वर्गों को अब भी अपेक्षित लाभ नहीं मिला है। इस संदर्भ में अमर्त्य सेन का कथन उल्लेखनीय है—
"न्यायपूर्ण नीति के लिए सही आँकड़े उतने ही आवश्यक हैं, जितनी सही नीयत।" — अमर्त्य सेन।

हालाँकि, जाति आधारित जनगणना के विरोध में भी गंभीर तर्क दिए जाते हैं। सबसे बड़ी आशंका यह है कि इससे जाति की पहचान और अधिक सुदृढ़ होगी। भारत जैसे समाज में, जहाँ जातिगत चेतना पहले से ही गहरी है, जाति आधारित आँकड़े राजनीतिक दलों को पहचान की राजनीति के लिए नया आधार दे सकते हैं। इससे समाज में 'हम' और 'वे' की भावना को बल मिल सकता है, जो सामाजिक समरसता के लिए घातक सिद्ध हो सकता है।

राजनीतिक दृष्टि से यह विषय अत्यंत संवेदनशील है। चुनावी लोकतंत्र में जाति आधारित जनगणना का उपयोग वोट बैंक की राजनीति के लिए किया जा सकता है। आँकड़ों के आधार पर राजनीतिक दल जातिगत ध्रुवीकरण को बढ़ावा दे सकते हैं, जिससे नीति और विकास के मुद्दे हाशिये पर चले जाएँ। यह स्थिति लोकतंत्र की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती है और सामाजिक तनाव को बढ़ा सकती है।

एक अन्य चिंता यह भी है कि जाति आधारित जनगणना कहीं सामाजिक पहचान को स्थायी और कठोर न बना दे। यदि जाति को लगातार प्रशासनिक और राजनीतिक विमर्श के केंद्र में रखा गया, तो व्यक्ति की पहचान उसके कौशल, क्षमता और नागरिकता के बजाय उसकी जाति से निर्धारित होने लगेगी। यह संविधान के उस आदर्श के विपरीत होगा, जिसमें एक ऐसे समाज की कल्पना की गई है जहाँ जाति का प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त हो जाए।

इसके बावजूद यह तर्क भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि जाति की अनदेखी करने से जाति समाप्त नहीं हो जाती। सामाजिक वास्तविकताओं से आँख मूँद लेना समाधान नहीं हो सकता। प्रश्न यह नहीं है कि जाति आधारित जनगणना हो या न हो, बल्कि यह है कि उसका उद्देश्य और उपयोग क्या हो। यदि इसका प्रयोग केवल सामाजिक-आर्थिक नीतियों को अधिक समावेशी और न्यायपूर्ण बनाने के लिए किया जाए, तो यह सामाजिक समावेशन का प्रभावी माध्यम बन सकती है।

# खंड-3: स्थानीय लोकोक्ति पर आधारित निबंध

## 1. अधिका जोगी मठ के उजार

"अधिका जोगी मठ के उजार" एक प्रचलित लोक कहावत है, जिसका आशय यह है कि जब किसी कार्य, संस्था या व्यवस्था में आवश्यकता से अधिक नेतृत्व, हस्तक्षेप या निर्णयकर्ता हो जाते हैं, तो व्यवस्था सुधरने के बजाय बिगड़ जाती है। यह कहावत केवल किसी धार्मिक मठ तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक, प्रशासनिक, राजनीतिक और पारिवारिक जीवन—सभी क्षेत्रों में समान रूप से लागू होती है। इसमें अनुभवजन्य सत्य छिपा है, जो बताता है कि अनुशासन, स्पष्ट जिम्मेदारी और सीमित नेतृत्व किसी भी व्यवस्था के लिए अनिवार्य होते हैं।

मठ का अर्थ यहाँ केवल धार्मिक संस्था नहीं, बल्कि किसी भी संगठित व्यवस्था का प्रतीक है। जोगी साधना, संयम और अनुशासन का प्रतिनिधित्व करता है। किंतु जब साधना के स्थान पर वर्चस्व की भावना आ जाए और हर व्यक्ति स्वयं को नेतृत्वकर्ता मानने लगे, तब मठ का उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है। यही स्थिति समाज और संस्थाओं में भी देखने को मिलती है। जहाँ सभी निर्देश देना चाहते हैं, पर कोई जिम्मेदारी उठाने को तैयार नहीं होता, वहाँ अव्यवस्था स्वाभाविक रूप से जन्म लेती है।

सामाजिक जीवन में इस कहावत की प्रासंगिकता स्पष्ट दिखाई देती है। किसी सामूहिक कार्य—जैसे गाँव का विकास, सामुदायिक आयोजन या सामाजिक आंदोलन—में यदि बहुत अधिक लोग अपने-अपने विचार थोपने लगें, तो निर्णय प्रक्रिया बाधित हो जाती है। परिणामस्वरूप न तो कोई स्पष्ट दिशा बनती है और न ही कार्य समय पर पूरा हो पाता है। विचारों की अधिकता, जब समन्वय के बिना हो, तब वह शक्ति नहीं, बल्कि बाधा बन जाती है।

प्रशासनिक और संस्थागत स्तर पर भी यह कहावत अत्यंत सार्थक है। यदि किसी कार्यालय या संगठन में निर्णय लेने की स्पष्ट संरचना न हो और हर स्तर पर अनावश्यक हस्तक्षेप होने लगे, तो कार्यकुशलता घट जाती है। जिम्मेदारी तय न होने से दोषारोपण बढ़ता है और कार्य का स्तर गिरने लगता है। इस संदर्भ में "अधिका जोगी मठ के उजार" एक चेतावनी की तरह है, जो बताती है कि नेतृत्व की संख्या नहीं, बल्कि उसकी स्पष्टता और गुणवत्ता महत्वपूर्ण होती है।

राजनीतिक क्षेत्र में भी यह कहावत बार-बार सत्य सिद्ध होती है। जब किसी दल या सरकार में अत्यधिक शक्ति-केंद्र बन जाते हैं और नीतिगत निर्णय सामूहिक उत्तरदायित्व के बजाय आपसी प्रतिस्पर्धा का परिणाम बनने लगते हैं, तब शासन की प्रभावशीलता कम हो जाती है। नीति-निर्माण में विलंब, भ्रम और विरोधाभास इसी स्थिति के परिणाम होते हैं। इतिहास में अनेक उदाहरण मिलते हैं जहाँ आंतरिक खींचतान के कारण मजबूत व्यवस्थाएँ भी कमजोर पड़ गईं।

पारिवारिक जीवन में भी इस कहावत की सार्थकता दिखाई देती है। यदि घर में हर सदस्य स्वयं को अंतिम निर्णयकर्ता मानने लगे और आपसी समझ की जगह टकराव बढ़ जाए, तो पारिवारिक शांति भंग हो जाती है। परिवार, जो सहयोग और सामंजस्य पर आधारित संस्था है, वह तब तनाव और असंतोष का केंद्र बन जाता है। यहाँ भी आवश्यकता संतुलन की होती है—जहाँ अनुभव का सम्मान हो, पर अनावश्यक हस्तक्षेप न हो।

शिक्षा के क्षेत्र में भी "अधिका जोगी मठ के उजार" का भावार्थ लागू होता है। यदि किसी शैक्षणिक संस्था में अत्यधिक नियम, परस्पर विरोधी निर्देश और अस्पष्ट शैक्षणिक दृष्टि हो, तो छात्रों और शिक्षकों—दोनों में भ्रम उत्पन्न होता है। शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान-विकास होता है, न कि प्रशासनिक जटिलताओं में उलझना। इसलिए स्पष्ट नीति और सीमित, उत्तरदायी नेतृत्व आवश्यक होता है।

यह कहावत यह नहीं कहती कि विचार-विमर्श या सामूहिक निर्णय गलत है। वास्तव में, सामूहिकता लोकतांत्रिक व्यवस्था की शक्ति है। परंतु जब सामूहिकता अनुशासन और समन्वय के बिना हो जाती है, तब वह अव्यवस्था में बदल जाती है। सही अर्थों में यह कहावत अति के विरुद्ध चेतावनी है—चाहे वह नेतृत्व की अति हो, हस्तक्षेप की अति हो या मतभेदों की अति।

इस कहावत का एक गहरा नैतिक पक्ष भी है। यह व्यक्ति को आत्मसंयम की शिक्षा देती है। हर व्यक्ति को यह समझना आवश्यक है कि हर स्थान पर नेतृत्व करना या अपनी बात मनवाना आवश्यक नहीं होता। कभी-कभी पीछे रहकर सहयोग करना ही सबसे बड़ा योगदान होता है। यही भाव सामाजिक सौहार्द और संस्थागत स्थिरता को बनाए रखता है।

आधुनिक समय में, जब सोशल मीडिया और त्वरित अभिव्यक्ति के कारण हर व्यक्ति स्वयं को विशेषज्ञ और निर्णायक मानने लगा है, तब यह कहावत और भी प्रासंगिक हो जाती है। विचारों की बहुलता आवश्यक है, पर यदि हर विचार स्वयं को अंतिम सत्य मानने लगे, तो संवाद समाप्त हो जाता है। समाज में शोर बढ़ता है, समाधान नहीं। ऐसे में "अधिका जोगी मठ के उजार" हमें विवेक और संयम की याद दिलाती है।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि यह कहावत नेतृत्व-विरोधी नहीं है। यह कुशल और सीमित नेतृत्व का समर्थन करती है। ऐसा नेतृत्व, जो सुनना जानता हो, समन्वय स्थापित कर सके और जिम्मेदारी स्वीकार करे। जहाँ नेतृत्व स्पष्ट होता है, वहाँ व्यवस्था सुदृढ़ होती है; और जहाँ नेतृत्व बिखरा होता है, वहाँ मठ उजड़ जाता है।

अंततः "अधिका जोगी मठ के उजार" जीवन के हर क्षेत्र में संतुलन का संदेश देती है। यह बताती है कि किसी भी कार्य में सफलता के लिए संख्या से अधिक संयम, स्पष्टता और समन्वय आवश्यक होते हैं। अति—चाहे वह शक्ति की हो, विचारों की हो या हस्तक्षेप की—अव्यवस्था को जन्म देती है।

इसलिए यह कहावत केवल लोकबुद्धि का परिणाम नहीं, बल्कि सामाजिक अनुभव का निचोड़ है। यदि समाज, संस्थाएँ और व्यक्ति इस संदेश को समझ लें, तो अनेक समस्याएँ अपने आप सुलझ सकती हैं। संतुलित नेतृत्व और साझा उत्तरदायित्व ही किसी भी "मठ" को उजड़ने से बचा सकता है।

## 2. अभागा गइने ससुरारी अउरी उहवों माँड़े-भात

गाँव के एक कोने में रहने वाला रामधनी अपने भाग्य को कोसता हुआ ससुराल की ओर चला था। घर में गरीबी थी, पेट भरना मुश्किल हो रहा था। उसे उम्मीद थी कि ससुराल पहुँचकर कुछ सहारा मिलेगा—शायद सम्मान, शायद अच्छा भोजन, या कम से कम अपनापन। पर जब वह वहाँ पहुँचा, तो उसके सामने परोसा गया माँड़े-भात—यानी मोटे अनाज का फीका भोजन, जो वहाँ की तंगी और विवशता का प्रतीक था। रामधनी के मन में एक ही बात गूँज रही थी—"अभागा गइने ससुरारी अउरी उहवों माँड़े-भात।"

यही अनुभव इस लोकोक्ति का मूल भाव है।

यह कहावत उस स्थिति को व्यक्त करती है, जब कोई व्यक्ति पहले से ही दुर्भाग्य का शिकार हो और जहाँ उसे राहत या सहारा मिलने की उम्मीद हो, वहाँ भी निराशा ही हाथ लगे। ससुराल सामान्यतः सहारे, सम्मान और सुविधा का प्रतीक माना जाता है, किंतु जब वहाँ भी कष्ट ही मिले, तो व्यक्ति का दुर्भाग्य और गहरा हो जाता है। इस लोकोक्ति में अपेक्षा और वास्तविकता के टकराव को अत्यंत सहज ढंग से व्यक्त किया गया है।

सामाजिक जीवन में यह कहावत अनेक संदर्भों में सत्य सिद्ध होती है। कई बार व्यक्ति अपने जीवन की कठिनाइयों से बचने के लिए किसी नए स्थान, नए संबंध या नई व्यवस्था की ओर देखता है। उसे लगता है कि परिस्थिति बदलते ही उसका भाग्य भी बदल जाएगा। लेकिन जब नई जगह पर भी वही समस्याएँ, वही अभाव और वही संघर्ष सामने आ जाएँ, तब यह कहावत सार्थक हो उठती है। यह केवल भोजन या गरीबी की बात नहीं करती, बल्कि निराश उम्मीदों की कथा कहती है।

यह लोकोक्ति मानवीय मनोविज्ञान को भी उजागर करती है। मनुष्य संकट में सबसे पहले आशा का सहारा लेता है। वह मानता है कि कहीं न कहीं उसे राहत मिलेगी। पर जब वही आशा टूट जाती है, तो पीड़ा केवल शारीरिक नहीं रहती, बल्कि मानसिक और भावनात्मक भी बन जाती है। "माँड़े-भात" यहाँ केवल साधारण भोजन नहीं, बल्कि उस टूटती हुई आशा का प्रतीक है।

आर्थिक और सामाजिक संदर्भ में देखें, तो यह कहावत उन वर्गों की स्थिति को दर्शाती है, जो एक संकट से निकलकर दूसरे संकट में फँस जाते हैं। बेरोजगारी से बचने के लिए शहर जाना, कर्ज से राहत पाने के लिए नया कर्ज लेना, या शोषण से बचने के लिए नई व्यवस्था अपनाना—कई बार ये प्रयास अपेक्षित परिणाम नहीं देते। तब व्यक्ति महसूस करता है कि उसने जहाँ सहारे की उम्मीद की थी, वहाँ भी हालात अलग नहीं हैं।

पारिवारिक जीवन में भी यह कहावत लागू होती है। विवाह, संबंध या समझौते को कई बार समस्याओं का समाधान माना जाता है। पर यदि नए संबंधों में भी तनाव, उपेक्षा या अभाव बना रहे, तो व्यक्ति के लिए स्थिति और अधिक कठिन हो जाती है। यहाँ यह लोकोक्ति जीवन के उस कटु यथार्थ को सामने लाती है, जहाँ स्थान बदलने से परिस्थिति नहीं बदलती।

इस कहावत का एक गहरा नैतिक संकेत भी है। यह हमें यह सिखाती है कि केवल बाहरी सहारे पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं होता। जब तक व्यक्ति स्वयं में परिवर्तन, आत्मनिर्भरता और विवेक विकसित नहीं करता, तब तक परिस्थितियाँ बार-बार निराश कर सकती हैं। भाग्य को कोसने के साथ-साथ कर्म और तैयारी पर ध्यान देना भी आवश्यक है।

आधुनिक जीवन में यह लोकोक्ति और भी प्रासंगिक हो गई है। बेहतर अवसरों की तलाश में लोग स्थान, नौकरी और संबंध बदलते हैं। पर यदि व्यवस्था, कौशल या सोच में बदलाव न हो, तो निराशा दोहराई जाती है। ऐसे में यह कहावत हमें यथार्थवादी दृष्टि अपनाने की सीख देती है।

अंततः "अभागा गइने ससुरारी अउरी उहवों माँड़े-भात" केवल दुर्भाग्य की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि जीवन के अनुभव से उपजा एक गहरा सत्य है। यह बताती है कि हर उम्मीद पूरी नहीं होती और हर सहारा राहत नहीं देता। साथ ही यह हमें यह भी सिखाती है कि जीवन में संतुलन, आत्मनिर्भरता और विवेक ही सबसे बड़ा सहारा हैं।

इस लोकोक्ति में छिपा संदेश यही है कि परिस्थितियों से भागने के बजाय उन्हें समझकर, स्वयं को सशक्त बनाकर आगे बढ़ना ही वास्तविक समाधान है। तभी व्यक्ति माँड़े-भात जैसी निराशा से ऊपर उठकर जीवन में स्थायित्व और संतोष पा सकता है।

## 3. आगे नाथ ना पीछे पगहा, खा मोटा के भइने गदहा

"आगे नाथ ना पीछे पगहा, खा मोटा के भइने गदहा" एक प्रचलित लोक कहावत है, जो ऐसे व्यक्ति या व्यवस्था की स्थिति को दर्शाती है जहाँ न तो कोई दिशा होती है, न कोई नियंत्रण, परंतु सुविधा और लाभ का उपभोग लगातार किया जाता है। इस कहावत में लोकजीवन का गहरा व्यंग्य छिपा है, जो अनुशासनहीनता, जिम्मेदारी के अभाव और अवसरवादी प्रवृत्ति पर तीखा प्रहार करता है।

इस कहावत के प्रतीक अत्यंत सजीव हैं। 'नाथ' और 'पगहा' नियंत्रण, अनुशासन और दिशा के प्रतीक हैं। इनके अभाव का अर्थ है कि व्यक्ति या व्यवस्था किसी नियम, लक्ष्य या मर्यादा से बंधी नहीं है। वहीं 'खा मोटा' और 'गदहा' उस स्थिति को दर्शाते हैं, जहाँ बिना परिश्रम, उत्तरदायित्व या उद्देश्य के केवल उपभोग होता है और धीरे-धीरे जड़ता व अयोग्यता बढ़ती जाती है। इस प्रकार यह कहावत केवल आलस्य की नहीं, बल्कि अनुशासनहीन समृद्धि की आलोचना करती है।

व्यक्तिगत जीवन में यह कहावत अनेक बार सत्य सिद्ध होती है। जब कोई व्यक्ति न तो अपने जीवन का लक्ष्य तय करता है और न ही अपने व्यवहार पर नियंत्रण रखता है, लेकिन सुविधाएँ उसे सहज उपलब्ध हो जाती हैं, तब उसका विकास रुक जाता है। बिना दिशा और अनुशासन के मिली सुविधाएँ व्यक्ति को आत्मनिर्भर नहीं, बल्कि निर्भर और निष्क्रिय बनाती हैं। परिणामस्वरूप उसकी क्षमता कुंद होती जाती है और वह अपने दायित्वों से दूर होता चला जाता है।

सामाजिक स्तर पर यह कहावत और भी व्यापक अर्थ ग्रहण करती है। जब किसी समाज में नियमों का पालन ढीला पड़ जाता है और उत्तरदायित्व की भावना कमजोर हो जाती है, पर संसाधनों का उपभोग जारी रहता है, तब सामाजिक पतन की स्थिति उत्पन्न होती है। ऐसे समाज में न तो नैतिक अनुशासन रहता है और न ही विकास की स्पष्ट दिशा। सुविधाएँ धीरे-धीरे अधिकार समझ ली जाती हैं और कर्तव्य उपेक्षित हो जाते हैं।

प्रशासनिक और संस्थागत संदर्भ में भी यह कहावत अत्यंत प्रासंगिक है। यदि किसी संस्था में स्पष्ट नीति, निगरानी और जवाबदेही न हो, लेकिन संसाधनों का उपभोग निर्बाध चलता रहे, तो कार्यकुशलता समाप्त हो जाती है। अधिकारी और कर्मचारी दोनों ही दायित्वहीनता की स्थिति में पहुँच जाते हैं। संगठन बाहरी रूप से चलता हुआ दिख सकता है, पर भीतर से वह निष्क्रिय हो जाता है। ऐसी स्थिति में संस्थागत 'मोटापा' बढ़ता है, पर क्षमता घटती जाती है।

राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में यह कहावत सत्ता और व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य करती है। जब शासन में न तो स्पष्ट दृष्टि होती है, न दीर्घकालिक नीति, और न ही प्रभावी नियंत्रण, लेकिन सत्ता-सुख और संसाधनों का उपभोग चलता रहता है, तब लोकतांत्रिक व्यवस्था कमजोर होने लगती है। शासन जनता के प्रति उत्तरदायी होने के बजाय सुविधा-केन्द्रित हो जाता है। यह स्थिति अंततः सामाजिक असंतोष और अव्यवस्था को जन्म देती है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी इस कहावत का भावार्थ देखा जा सकता है। यदि शिक्षा व्यवस्था में अनुशासन, मूल्यबोध और स्पष्ट उद्देश्य का अभाव हो, लेकिन डिग्रियाँ और सुविधाएँ सहज उपलब्ध कराई जाएँ, तो छात्रों का बौद्धिक और नैतिक विकास बाधित होता है। शिक्षा

तब ज्ञानार्जन का माध्यम न रहकर केवल प्रमाण-पत्र प्राप्त करने की प्रक्रिया बन जाती है। यह स्थिति समाज के भविष्य के लिए गंभीर चुनौती बनती है।

इस कहावत का एक महत्वपूर्ण नैतिक संदेश यह है कि अनुशासन और दिशा के बिना समृद्धि विनाशकारी हो सकती है। सुविधा तभी सार्थक होती है, जब वह जिम्मेदारी और परिश्रम से जुड़ी हो। बिना नियंत्रण के मिला सुख व्यक्ति और समाज—दोनों को कमजोर करता है। लोकबुद्धि इस सत्य को सरल प्रतीकों के माध्यम से समझा देती है।

आधुनिक समय में इस कहावत की प्रासंगिकता और बढ़ गई है। उपभोक्तावादी संस्कृति ने सुविधाओं को जीवन का केंद्र बना दिया है, जबकि आत्मअनुशासन और संयम को हाशिए पर डाल दिया गया है। परिणामस्वरूप व्यक्ति लक्ष्यविहीन होते जा रहे हैं। वे बहुत कुछ पा तो रहे हैं, पर यह नहीं जानते कि उसका उपयोग कैसे करें। ऐसी स्थिति में समाज 'खा मोटा' तो हो रहा है, पर विवेक और कार्यक्षमता में गिरावट आ रही है।

यह कहावत यह नहीं कहती कि सुविधाएँ या संसाधन गलत हैं। बल्कि यह चेतावनी देती है कि यदि संसाधनों का उपभोग अनुशासन और उद्देश्य के बिना किया जाए, तो वे विकास का साधन न बनकर पतन का कारण बन जाते हैं। नियंत्रण और दिशा किसी भी प्रगति के लिए उतने ही आवश्यक हैं, जितने साधन।

अंततः "आगे नाथ ना पीछे पगहा, खा मोटा के भइने गदहा" लोकजीवन का एक गहरा अनुभवजन्य सत्य प्रस्तुत करती है। यह कहावत व्यक्ति, समाज और व्यवस्था—तीनों को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करती है। यह याद दिलाती है कि स्वतंत्रता का अर्थ निरंकुशता नहीं, और सुविधा का अर्थ दायित्वहीनता नहीं।

यदि जीवन में लक्ष्य, अनुशासन और उत्तरदायित्व का संतुलन बना रहे, तो संसाधन विकास का माध्यम बनते हैं। अन्यथा वही संसाधन जड़ता और पतन को जन्म देते हैं। इसीलिए यह कहावत आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी अपने जन्मकाल में थी—क्योंकि यह मनुष्य को उसके आचरण और दिशा पर विचार करने के लिए विवश करती है।

## 4. आपन पुतवा पुतवा ह अउरी सवतिया के पुतवा दूतवा ह

"आपन पुतवा पुतवा ह अउरी सवतिया के पुतवा दूतवा ह" एक गहरी लोक कहावत है, जो मनुष्य की स्वार्थपरक मानसिकता, पक्षपात और दोहरे मानदंड को उजागर करती है। इस कहावत का सीधा अर्थ है कि अपना बच्चा चाहे जैसा हो, वह प्रिय और निर्दोष लगता है, जबकि दूसरे का बच्चा—even यदि योग्य हो—त्रुटिपूर्ण और दोषी दिखाई देता है। लोकजीवन की यह कहावत केवल पारिवारिक संदर्भ तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक, प्रशासनिक, राजनीतिक और नैतिक जीवन के अनेक पक्षों पर समान रूप से लागू होती है।

इस कहावत का मूल भाव मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति से जुड़ा है। व्यक्ति अपने से जुड़े लोगों, विचारों और हितों के प्रति सहज रूप से सहानुभूति रखता है, जबकि दूसरों के प्रति उसका दृष्टिकोण प्रायः आलोचनात्मक होता है। यह प्रवृत्ति यदि सीमित और संयमित रहे, तो स्वाभाविक मानी जा सकती है; परंतु जब यह अन्याय और भेदभाव का रूप ले लेती है, तब सामाजिक संतुलन को नुकसान पहुँचाती है।

पारिवारिक जीवन में यह कहावत अक्सर दिखाई देती है। माता-पिता अपने बच्चों की गलतियों को अनदेखा कर देते हैं, उन्हें परिस्थितियों का परिणाम मान लेते हैं, जबकि दूसरे के बच्चों की छोटी-सी भूल भी उन्हें बड़ी लगने लगती है। यह पक्षपात बच्चों में भी असमानता और तुलना की भावना को जन्म देता है। परिवार, जो न्याय और प्रेम का पहला विद्यालय होता है, यदि वहीं पक्षपात हावी हो जाए, तो बच्चों के मानसिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक जीवन में यह कहावत और भी व्यापक अर्थ ग्रहण कर लेती है। जाति, वर्ग, क्षेत्र या समुदाय के आधार पर अपने लोगों को श्रेष्ठ और दूसरों को हीन समझने की प्रवृत्ति इसी मानसिकता का विस्तार है। व्यक्ति अपने समूह की कमजोरियों को नजरअंदाज करता है, पर दूसरे समूह की कमियों को बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत करता है। यही सोच सामाजिक विभाजन, अविश्वास और संघर्ष को जन्म देती है।

प्रशासनिक और संस्थागत संदर्भ में यह कहावत पक्षपात और भाई-भतीजावाद की ओर संकेत करती है। जब अधिकारी अपने लोगों की गलतियों पर पर्दा डालते हैं और दूसरों के प्रति कठोर रुख अपनाते हैं, तब न्याय की भावना कमजोर हो जाती है। ऐसी व्यवस्था में योग्यता का स्थान संबंध ले लेता है और संस्थान की विश्वसनीयता समाप्त होने लगती है। यह स्थिति केवल व्यक्तियों को नहीं, बल्कि पूरे तंत्र को नुकसान पहुँचाती है।

राजनीतिक क्षेत्र में "आपन पुतवा पुतवा ह…" की मानसिकता और भी स्पष्ट दिखाई देती है। अपने समर्थकों की गलतियों को तर्क देकर सही ठहराया जाता है, जबकि विरोधियों की छोटी-सी चूक को भी बड़ा अपराध बना दिया जाता है। नीति और नैतिकता का मूल्यांकन व्यक्ति या दल के आधार पर बदल जाता है। इससे लोकतांत्रिक विमर्श कमजोर होता है और राजनीति विश्वास के बजाय संदेह पर आधारित हो जाती है।

शिक्षा और मूल्य-निर्माण के क्षेत्र में भी यह कहावत प्रासंगिक है। यदि शिक्षक या संस्थान अपने पसंदीदा विद्यार्थियों के प्रति नरम और दूसरों के प्रति कठोर हों, तो शिक्षा का उद्देश्य ही विफल हो जाता है। शिक्षा का मूल लक्ष्य निष्पक्षता, विवेक और समान अवसर देना है। पक्षपातपूर्ण दृष्टि छात्रों में हीनता और विद्रोह की भावना को जन्म देती है।

इस कहावत का एक गहरा नैतिक पक्ष भी है। यह मनुष्य को आत्ममंथन के लिए प्रेरित करती है। प्रश्न उठता है कि क्या हम अपने आचरण में न्यायपूर्ण हैं, या केवल अपने हितों के अनुसार सही-गलत तय करते हैं। नैतिकता की कसौटी यही है कि व्यक्ति अपने और पराए—दोनों के लिए एक समान मानदंड अपनाए। जब यह कसौटी टूटती है, तब समाज में असंतुलन बढ़ता है।

आधुनिक समय में यह कहावत और भी प्रासंगिक हो गई है। सोशल मीडिया और सार्वजनिक विमर्श के दौर में लोग अपने विचारों और समूहों की गलतियों को正 ठहराते हैं, जबकि दूसरों की बातों में केवल दोष खोजते हैं। यह मानसिकता संवाद को विवाद में बदल देती है। समाज में ध्रुवीकरण बढ़ता है और सत्य की जगह सुविधा-आधारित व्याख्या ले लेती है।

यह कहावत यह नहीं कहती कि अपने लोगों से प्रेम करना गलत है। प्रेम और अपनापन मानवीय गुण हैं। परंतु समस्या तब पैदा होती है, जब यह प्रेम अन्याय का औचित्य बन जाए। सच्चा प्रेम वह है, जो अपने को भी सुधार की दृष्टि से देख सके और दूसरों के साथ न्याय कर सके। पक्षपातपूर्ण प्रेम समाज को संकीर्ण बनाता है, जबकि न्यायपूर्ण दृष्टि उसे व्यापक बनाती है।

इस लोक कहावत का समाधान भी उसी में निहित है—विवेक और निष्पक्षता। यदि व्यक्ति अपने निर्णयों में यह प्रश्न रखे कि वह जो अपने लिए उचित मान रहा है, वही दूसरे के लिए भी उचित है या नहीं, तो अनेक सामाजिक समस्याएँ स्वतः सुलझ सकती हैं। यह सोच व्यक्ति को संकीर्णता से बाहर निकालकर मानवीयता की ओर ले जाती है।

अंततः "आपन पुतवा पुतवा ह अउरी सवतिया के पुतवा दूतवा ह" लोकजीवन का एक कटु, पर सत्य अनुभव प्रस्तुत करती है। यह कहावत हमें यह समझाती है कि समाज की सबसे बड़ी कमजोरी बाहरी शत्रु नहीं, बल्कि आंतरिक पक्षपात होता है। जब तक व्यक्ति अपने और पराए के बीच भेद करता रहेगा, तब तक न्याय और सामंजस्य की स्थापना कठिन रहेगी।

यदि समाज को संतुलित, न्यायपूर्ण और समरस बनाना है, तो इस कहावत को केवल व्यंग्य के रूप में नहीं, बल्कि चेतावनी के रूप में समझना होगा। अपने को भी उसी कसौटी पर कसना होगा, जिस पर हम दूसरों को कसते हैं। तभी लोकबुद्धि का यह संदेश सार्थक होगा और समाज अधिक मानवीय दिशा में आगे बढ़ सकेगा।

# D बिहार में प्रचलित प्रमुख लोकोक्तियाँ एवं अर्थ

**1. अगिला खेती आगे-आगे, पछिला खेती भागे जागे**

**Hinglish:** Agila Kheti Aage-Aage, Pichla Kheti Bhage Jage

**अर्थ:** इस लोकोक्ति का आशय है कि जो व्यक्ति समय रहते योजना बनाकर कार्य करता है, वही आगे रहता है। खेती का उदाहरण देकर यह समझाया गया है कि जो किसान समय पर बुवाई करता है, उसकी फसल अच्छी होती है, जबकि देर करने वाला किसान पूरे मौसम भाग-दौड़ करता रह जाता है। जीवन में भी यही सिद्धांत लागू होता है। पढ़ाई, नौकरी, व्यवसाय या पारिवारिक जीवन—हर क्षेत्र में अग्रिम तैयारी सफलता की कुंजी होती है। समय पर निर्णय न लेने वाला व्यक्ति हमेशा दबाव में रहता है और अवसर खो देता है। यह लोकोक्ति हमें समय प्रबंधन, दूरदर्शिता और अनुशासन का महत्व समझाती है।

**2. अंडा सिखावे बच्चा के, ए बच्चा तू चेंव-चेंव करअ**

**Hinglish:** Anda Sikhave Bachcha Ke, E Bachcha Tu Chein-Chein Kar

**अर्थ:** यह लोकोक्ति उस स्थिति को दर्शाती है जब अज्ञानी व्यक्ति ज्ञानी को उपदेश देने का प्रयास करता है। जैसे एक निर्जीव अंडा बच्चे को चलना सिखाने लगे, वैसे ही ज्ञानहीन व्यक्ति की सलाह निरर्थक होती है। समाज में अक्सर देखा जाता है कि बिना अनुभव और समझ वाले लोग विशेषज्ञों को निर्देश देने लगते हैं, जिससे भ्रम और गलत निर्णय होते हैं। यह कहावत अनुभव, योग्यता और विवेक के महत्व को रेखांकित करती है। सही मार्गदर्शन वही दे सकता है जिसके पास व्यवहारिक ज्ञान और जीवन अनुभव हो। यह लोकोक्ति अनावश्यक अहंकार से बचने और सीखने की भावना अपनाने की प्रेरणा देती है।

**3. अपनी दुआरे, कुतवो बरिआरे**

**Hinglish:** Apni Duare, Kutvo Bariyare

**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि व्यक्ति अपने क्षेत्र में स्वयं को बहुत शक्तिशाली समझने लगता है। जैसे अपनी गली में एक साधारण कुत्ता भी शेर जैसा व्यवहार करता है। यह कहावत सीमित अधिकार या प्रभाव मिलने से उत्पन्न अहंकार की ओर संकेत करती है। कई बार लोग छोटे पद या स्थानीय प्रभाव पाकर दूसरों पर रौब जमाने लगते हैं, लेकिन वास्तविकता में उनकी शक्ति सीमित होती है। यह लोकोक्ति आत्ममूल्यांकन और विनम्रता का संदेश देती है। व्यक्ति को अपनी वास्तविक क्षमता पहचाननी चाहिए और यह समझना चाहिए कि सच्ची शक्ति चरित्र और व्यवहार से आती है, न कि केवल स्थान या परिस्थिति से।

**4. अपने खाईं, बिलरिया लगाईं**

**Hinglish:** Apne Khain, Billiya Lagain

**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव यह है कि व्यक्ति स्वयं गलती करता है लेकिन दोष किसी और पर डाल देता है। जैसे कोई खुद दूध पी जाए और बाद में बिल्ली को दोषी ठहरा दे। यह मानव स्वभाव की एक सामान्य कमजोरी को उजागर करती है। समाज, राजनीति और व्यक्तिगत जीवन में लोग अपनी असफलताओं की जिम्मेदारी लेने से बचते हैं। यह प्रवृत्ति समस्याओं को और जटिल बना देती है। यह लोकोक्ति आत्मस्वीकृति, ईमानदारी और उत्तरदायित्व की आवश्यकता पर बल देती है। जब तक व्यक्ति अपनी गलतियों को स्वीकार नहीं करता, तब तक सुधार और प्रगति संभव नहीं है।

**5. अबरे के मेहरारू गाँवभरी के भउजाई**

**Hinglish:** Abre Ke Mehararu Gaonbhari Ke Bhaujai

**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि कमजोर व्यक्ति को समाज में हर कोई सताने लगता है। शक्ति और संसाधनों की कमी के कारण कमजोर वर्ग का शोषण आसान हो जाता है। यह कहावत सामाजिक असमानता और अन्याय की वास्तविकता को दर्शाती है। समाज में अक्सर देखा जाता है कि निर्धन, असहाय या कमजोर लोगों की आवाज़ को दबा दिया जाता है। यह लोकोक्ति हमें यह सोचने पर मजबूर करती है कि न्यायपूर्ण समाज के लिए कमजोर वर्ग की सुरक्षा और सशक्तिकरण आवश्यक है। साथ ही, यह नैतिक जिम्मेदारी की याद दिलाती है कि ताकतवर वर्ग को कमजोरों का सहारा बनना चाहिए।

**6. अहिर से इयारी, भादो में उजारी**

**Hinglish:** Ahir Se Iyari, Bhado Mein Ujari

**अर्थ:** यह लोकोक्ति अविश्वसनीय मित्रता की ओर संकेत करती है। इसका भाव है कि कुछ संबंध केवल सुविधा या स्वार्थ पर आधारित होते हैं और संकट के समय साथ नहीं देते। जैसे भादो के महीने में खेत उजड़ जाते हैं, वैसे ही भरोसेमंद न होने वाली दोस्ती भी समय आने पर टूट जाती है। यह कहावत हमें सतर्क रहने की सीख देती है कि हर मित्रता सच्ची नहीं होती। जीवन में मित्र चुनते समय उनके चरित्र, निष्ठा और व्यवहार को परखना आवश्यक है। सच्चे संबंध वही होते हैं जो कठिन परिस्थितियों में भी साथ निभाएँ।

**7. आइल थोर दिन, गइल ढेर दिन**

**Hinglish:** Aail Thor Din, Gail Dher Din

**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि समय बहुत तेजी से बीत जाता है। जो समय आने वाला होता है, वह कम प्रतीत होता है, जबकि बीता हुआ समय बहुत लंबा लगता है। यह कहावत समय की क्षणभंगुरता को दर्शाती है। जीवन में लोग अक्सर वर्तमान को हल्के में लेते हैं और बाद में पछताते हैं। यह लोकोक्ति समय के सदुपयोग का संदेश देती है। प्रत्येक क्षण मूल्यवान है और उसे सार्थक कार्यों में लगाना चाहिए। बीता हुआ समय कभी वापस नहीं आता, इसलिए वर्तमान का सही उपयोग ही भविष्य को बेहतर बना सकता है।


© www.examdhara.com

प्रकट हो जाता है। यह कहावत ईमानदारी, भावनात्मक सच्चाई और आत्मसम्मान का महत्व समझाती है।

### 89. अनकर धान पाबि त अस्सी मन तौलाबी

**Hinglish:** Ankar Dhaan Paabi Ta Assi Man Taulabi
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव यह है कि दूसरों की वस्तु या संपत्ति को लोग अक्सर बढ़ा-चढ़ाकर बताते हैं। जब चीज़ अपनी न हो, तो उसका मूल्य, मात्रा या महत्व अतिरंजित कर दिया जाता है। यह कहावत मानव स्वभाव की उस प्रवृत्ति को उजागर करती है जिसमें व्यक्ति दूसरों की चीज़ को लेकर लालच या ईर्ष्या से ग्रस्त हो जाता है। समाज में यह व्यवहार अफवाहों, झूठी प्रशंसा या गलत तुलना का कारण बनता है। यह लोकोक्ति संतुलित दृष्टिकोण और सत्यनिष्ठा का संदेश देती है। किसी भी वस्तु या उपलब्धि का मूल्यांकन तथ्य और वास्तविकता के आधार पर होना चाहिए, न कि स्वार्थ या कल्पना के आधार पर। अतिशयोक्ति से भ्रम पैदा होता है और संबंधों में कटुता आती है।

### 90. माय बाप बिसैर गेलौं त बहू भेल फैमिली

**Hinglish:** Maai Baap Bisair Gailon Ta Bahu Bhel Family
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि स्वार्थ के कारण व्यक्ति अपने पुराने, सच्चे और मूल संबंधों को भुलाकर नए रिश्तों को प्राथमिकता देने लगता है। माता-पिता जैसे आधारभूत संबंधों को भूल जाना और सुविधा के अनुसार नए रिश्तों को 'परिवार' मान लेना स्वार्थी मानसिकता को दर्शाता है। यह कहावत बदलते सामाजिक मूल्यों और अवसरवादी रिश्तों पर तीखा व्यंग्य करती है। जीवन में रिश्तों की वास्तविक परीक्षा कठिन समय में होती है, न कि सुविधा में। यह लोकोक्ति कृतज्ञता, पारिवारिक मूल्यों और नैतिक जिम्मेदारी की याद दिलाती है। जो व्यक्ति अपने मूल संबंधों को भूल जाता है, वह अंततः भावनात्मक रूप से खाली हो जाता है। सच्चे रिश्ते स्वार्थ से नहीं, कर्तव्य और सम्मान से निभाए जाते हैं।

### 91. माय बाप करे कुटान पिसान, बेटा के नाम दुर्गा दत्त

**Hinglish:** Maai Baap Kare Kutan Pisan, Beta Ke Naam Durga Datt
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव यह है कि वास्तविक स्थिति कुछ और हो, लेकिन बाहरी दिखावा बहुत बड़ा हो। माता-पिता गरीबी, मेहनत और संघर्ष में जीवन गुजार रहे हैं, लेकिन बेटे का नाम 'दुर्गा दत्त' जैसे भव्य और प्रतिष्ठित नाम पर रखा गया है। यह कहावत समाज में दिखावटी मानसिकता पर तीखा व्यंग्य करती है, जहाँ लोग अपनी आर्थिक या सामाजिक स्थिति से अधिक ऊँचा दिखने का प्रयास करते हैं। नाम, उपाधि या बाहरी पहचान से वास्तविक स्थिति नहीं बदलती। यह लोकोक्ति सिखाती है कि सम्मान और प्रतिष्ठा नाम से नहीं, बल्कि कर्म, व्यवहार और परिश्रम से प्राप्त होती है। दिखावे पर आधारित पहचान लंबे समय तक टिकाऊ नहीं होती और अंततः वास्तविकता सामने आ ही जाती है।

### 92. करनी ने धरनी आ सुवर्णी नाम

**Hinglish:** Karni Na Dharni Aa Suvarni Naam
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि व्यक्ति के पास न तो कोई ठोस कार्य होता है और न ही कोई जिम्मेदारी निभाने का भाव, लेकिन उसका नाम या प्रचार बहुत बड़ा होता है। यह कहावत 'नाम बड़े और दर्शन छोटे' जैसी स्थिति को दर्शाती है। समाज में ऐसे लोग अक्सर केवल बातों, पदों या उपाधियों के सहारे अपनी पहचान बनाना चाहते हैं, जबकि उनके कर्म शून्य होते हैं। यह लोकोक्ति कर्म की प्रधानता को रेखांकित करती है। बिना कर्म के नाम का कोई मूल्य नहीं होता। वास्तविक सम्मान और विश्वास केवल कार्य, निष्ठा और योगदान से मिलता है। यह कहावत व्यक्ति को आत्ममूल्यांकन करने और दिखावे के बजाय वास्तविक कर्म पर ध्यान देने की सीख देती है।

### 93. काइंख तरि अँचार आ देखाबय पोथी के बिचार

**Hinglish:** Kaainkh Tari Aachar Aa Dekhaabay Pothi Ke Bichaar
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव कथनी और करनी के बीच के अंतर को उजागर करता है। व्यक्ति स्वयं तो साधारण या निम्न स्तर का आचरण करता है, लेकिन दूसरों को बड़े-बड़े सिद्धांत, ग्रंथों और आदर्शों की बातें सुनाता है। 'आँख के नीचे अचार' से तात्पर्य वास्तविक जीवन की गंदगी या अव्यवस्था से है, जबकि 'पोथी के विचार' ऊँचे आदर्शों का प्रतीक हैं। यह कहावत पाखंड और दोहरे आचरण पर तीखा व्यंग्य करती है। समाज में ऐसे लोग अक्सर नैतिकता का उपदेश देते हैं, लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं करते। यह लोकोक्ति सिखाती है कि उपदेश तभी प्रभावी होता है जब वह आचरण में भी दिखाई दे।

### 94. जेकर माय मरल तेक्कर पत्ता पर भाते नै

**Hinglish:** Jekar Maai Maral Tekk ar Patta Par Bhaate Nai
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है ऐसा व्यक्ति जो पूरी तरह बेसहारा हो गया हो। माँ के न रहने पर व्यक्ति की देखभाल, सुरक्षा और भावनात्मक सहारा समाप्त हो जाता है। यह कहावत माँ के महत्व और उसकी अनुपस्थिति में उत्पन्न असहायता को गहराई से दर्शाती है। समाज में माँ केवल संबंध नहीं, बल्कि संरक्षण और करुणा की प्रतीक होती है। जब यह आधार टूट जाता है, तो व्यक्ति जीवन की कठिनाइयों में अकेला पड़ जाता है। यह लोकोक्ति मानवीय संवेदनाओं को झकझोरती है और पारिवारिक सहारे के महत्व को रेखांकित करती है। यह हमें याद दिलाती है कि कमजोर और बेसहारा लोगों के प्रति समाज की जिम्मेदारी अधिक होती है।

### 95. करनी देखियौन मरनी बेर

**Hinglish:** Karni Dekhiyoun Marni Ber
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का गहरा अर्थ यह है कि जीवन के अंत में व्यक्ति के साथ केवल उसके कर्म ही जाते हैं। धन, पद, रिश्ते और दिखावा—सब यहीं रह जाते हैं। मृत्यु के समय व्यक्ति का


© www.examdhara.com

मूल्यांकन उसके कर्मों के आधार पर होता है, न कि उसकी संपत्ति या प्रसिद्धि के आधार पर। यह कहावत कर्मफल के सिद्धांत को स्पष्ट रूप से सामने रखती है। जीवन भर किए गए अच्छे या बुरे कार्य ही व्यक्ति की वास्तविक पहचान बनते हैं। यह लोकोक्ति व्यक्ति को यह सोचने के लिए प्रेरित करती है कि जीवन का प्रत्येक कार्य महत्व रखता है। इसलिए सदाचार, ईमानदारी और मानवता के साथ किया गया कर्म ही अंततः सार्थक होता है।

### 96. जेत्ते के बहु नै ओत्ते के लहठी

**Hinglish:** Jette Ke Bahu Nai, Otte Ke Laathi
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि व्यवस्था, साधन और संसाधन उतने ही होने चाहिए जितनी वास्तविक आवश्यकता हो। यदि जरूरत सीमित है, तो उसके लिए अत्यधिक तैयारी या साधन जुटाना न तो व्यावहारिक है और न ही बुद्धिमानी। यह कहावत संतुलन और मितव्ययिता का संदेश देती है। जीवन में कई बार लोग आवश्यकता से अधिक व्यवस्था कर लेते हैं, जिससे संसाधनों की बर्बादी होती है और बाद में समस्याएँ भी खड़ी हो जाती हैं। यह लोकोक्ति बताती है कि योजनाएँ वास्तविक जरूरतों के आधार पर बननी चाहिए, न कि दिखावे या अनावश्यक डर के कारण। संतुलित सोच व्यक्ति को न केवल आर्थिक रूप से सुरक्षित रखती है, बल्कि निर्णयों में भी स्पष्टता लाती है। आवश्यकता और व्यवस्था के बीच सामंजस्य ही विवेकपूर्ण जीवन का आधार है।

### 97. सरलो भुन्ना रोहू के दुन्ना

**Hinglish:** Saralo Bhunna Rohu Ke Dunna
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव यह है कि कुछ लोग सरल और सीधी बातों को भी अनावश्यक रूप से जटिल बना देते हैं। साधारण रोहू मछली को भी भूनकर दुगना कठिन बना देना इस प्रवृत्ति का प्रतीक है। जीवन में कई समस्याएँ वास्तव में सीधी होती हैं, लेकिन व्यक्ति अपनी उलझी सोच, अहंकार या अनावश्यक चालाकी के कारण उन्हें कठिन बना लेता है। यह कहावत बताती है कि सरलता में ही समाधान छिपा होता है। अनावश्यक पेचीदगी न केवल समय और ऊर्जा नष्ट करती है, बल्कि मानसिक तनाव भी बढ़ाती है। यह लोकोक्ति व्यक्ति को सरल सोच अपनाने, समस्याओं को मूल रूप में समझने और व्यावहारिक समाधान खोजने की प्रेरणा देती है। जटिलता नहीं, स्पष्टता ही प्रगति का मार्ग खोलती है।

### 98. जे सब सौं छोट से उनचास हाथ

**Hinglish:** Je Sab Saun Chhot Se Unchaas Haath
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि व्यक्ति अपनी वास्तविक स्थिति से थोड़ा-सा ऊपर दिखने या बनने की कोशिश करता है। यहाँ 'उनचास हाथ' का प्रयोग यह दर्शाने के लिए किया गया है कि छोटा होते हुए भी बड़ा दिखने की आकांक्षा बनी रहती है। यह कहावत मानवीय महत्वाकांक्षा और आत्म-प्रदर्शन की प्रवृत्ति को उजागर करती है। समाज में कई लोग अपनी सीमाओं को स्वीकार करने के बजाय स्वयं को बड़ा दिखाने का प्रयास करते हैं, जिससे वे अक्सर असहज और हास्यास्पद स्थिति में पड़ जाते हैं। यह लोकोक्ति आत्ममूल्यांकन और यथार्थबोध का संदेश देती है। वास्तविक उन्नति दिखावे से नहीं, बल्कि क्रमिक परिश्रम और क्षमता विकास से होती है।

### 99. देह पर नै लत्ता, आ चलय कलकत्ता

**Hinglish:** Deh Par Nai Latta, Aa Chalay Calcutta
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का भाव यह है कि व्यक्ति के पास मूलभूत साधन तक नहीं हैं, लेकिन उसके सपने और योजनाएँ अत्यंत बड़े हैं। शरीर पर कपड़ा नहीं और कलकत्ता जैसे बड़े शहर जाने की तैयारी—यह स्थिति अव्यावहारिक महत्वाकांक्षा का प्रतीक है। यह कहावत उन लोगों पर व्यंग्य करती है जो संसाधनों, तैयारी और क्षमता के बिना बड़े लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं। सपने देखना गलत नहीं है, लेकिन उन्हें साकार करने के लिए आवश्यक साधनों और परिश्रम की भी आवश्यकता होती है। यह लोकोक्ति यथार्थवाद, योजना और क्रमिक प्रगति का संदेश देती है। मजबूत आधार के बिना ऊँचे लक्ष्य केवल कल्पना बनकर रह जाते हैं।

### 100. अलखोसरी के दू टा फोसरी भेल, एक गो फुटि गेल, एक गो टहकै ये

**Hinglish:** Alkhosari Ke Du Ta Phosari Bhel, Ek Go Phuti Gel, Ek Go Tahkai Ye
**अर्थ:** इस लोकोक्ति का अर्थ है कि जो वस्तु या संरचना कमजोर होती है, वह जल्दी नष्ट हो जाती है या टूट-फूट का शिकार हो जाती है। कमजोर सामग्री से बनी चीज़ें अधिक समय तक टिक नहीं पातीं। यह कहावत केवल भौतिक वस्तुओं तक सीमित नहीं है, बल्कि व्यक्ति, व्यवस्था और विचारों पर भी लागू होती है। यदि किसी कार्य या संबंध की नींव कमजोर हो, तो वह थोड़े से दबाव में ही टूट जाता है। यह लोकोक्ति मजबूती, गुणवत्ता और ठोस आधार के महत्व को रेखांकित करती है। स्थायित्व के लिए आवश्यक है कि नींव मजबूत हो—चाहे वह शिक्षा हो, चरित्र हो या व्यवस्था। कमजोर आधार पर खड़ी चीज़ें लंबे समय तक नहीं टिकतीं।

# E निबंध के लिए उपयोगी उद्धरण

| Sl. No. | उद्धरण (Quotation) | लेखक (Author) | विषय (Subject / Theme) |
|---|---|---|---|
| 1 | इंसाफ के न्यायालयों से भी ऊपर एक न्यायालय है और वह है अंत:करण का न्यायालय। | महात्मा गांधी | अंत:करण और नैतिक न्याय |
| 2 | जितना हम अध्ययन करते हैं, उतना ही हमें अपने अज्ञान का आभास होता जाता है। | शेली | अध्ययन / विज्ञान |
| 3 | एक स्त्री जो यह समझती है कि एक घर चलाने में क्या समस्याएँ हैं, वह यह समझने के बहुत नजदीक है कि एक देश चलाने में क्या समस्याएँ हैं? | मारिट श्रेचर | अनुभव से नेतृत्व |
| 4 | अनुशासन विपत्ति की पाठशाला में सीखा जाता है। | महात्मा गांधी | अनुशासन / अनुभव |
| 5 | अपनी इच्छाओं पर अनुशासन ही आपके चरित्र का आधार है। | जॉन लॉक | अनुशासन / आत्मसंयम |
| 6 | प्राथमिकताओं को समझना ही वास्तविक नेतृत्व है और उसका अनुकरण करना अर्थात् अनुशासन ही वास्तविक प्रबंधन है। | स्टीफन कोवी | अनुशासन / नेतृत्व |
| 7 | अनुशासन ही उद्देश्य और उपलब्धि के बीच का सेतु है। | जिम रॉन | अनुशासन / सफलता |
| 8 | वह उठा तो उठ पड़े युग-युग दबे, दुखिया, दलित कमजोर, वह उठा तो उठ पड़ीं उत्साह की लहरें इगों के बीच, वह उठा तो झुक गए अन्याय, अत्याचार के अभिमान, हो गया क्या देश के सबसे प्रगतिमय दीप का निर्वाण। | हरिवंश राय 'बच्चन' | अन्याय/इतिहास |
| 9 | ऐसा समय भी हो सकता है जब हम अन्याय को रोकने में असमर्थ हो जाएँ, लेकिन ऐसा समय कभी नहीं आना चाहिए जब हम उसका विरोध करने में असफल हो जाएँ। | एली विसेल | अन्याय/न्याय |
| 10 | हाथ की चक्की सामंतवाद पैदा करती है, भाप का इंजन पूंजीवाद पैदा करता है। | कार्ल मार्क्स | अर्थव्यवस्था / उत्पादन |
| 11 | पूंजीवाद में अच्छी चीजों का असमान बँटवारा जबकि समाजवाद में बुरी चीजों का समान बंटवारा होता है। | विंस्टन चर्चिल | अर्थव्यवस्था / तुलनात्मक दृष्टि |
| 12 | बिना उपयोगिता के किसी वस्तु का कोई मूल्य नहीं होता। | कार्ल मार्क्स | अर्थव्यवस्था / मूल्य |
| 13 | युद्धभूमि में कोई तोप नहीं है, कोई हथियार नहीं है। सामने सिर्फ एक बाजार है। कोई भी बता सकता है युद्ध में किसकी जीत होगी। | विमल कुमार | अर्थव्यवस्था / युद्ध |
| 14 | ये नए युग के सौदागर हैं, बेचना और खरीदना नहीं, केवल छीनना जानते हैं, ये कभी सामने नहीं आते, रहते हैं कहीं दूर समंदर के इस या उस पार। | मदन कश्यप | अर्थव्यवस्था / वैश्विक बाज़ार |
| 15 | एक मजबूत अर्थव्यवस्था एक मजबूत और बेहतर शिक्षित कार्यशक्ति के साथ शुरू होती है। | बिल ओवेन्स | अर्थव्यवस्था / शिक्षा |
| 16 | अर्थव्यवस्था किसी भी चीज का प्रारंभ और अंत है। अगर आपके पास एक मजबूत अर्थव्यवस्था नहीं है तो कोई भी ठोस सुधार नहीं कर सकते हैं। | डेविड कैमरून | अर्थव्यवस्था / सुधार |
| 17 | मुझे नहीं लगता कि मानव जाति अगले हजार साल बची रह पाएगी, जब तक कि हम अंतरिक्ष में विस्तार नहीं करते। | स्टीफन हॉकिंग | अस्तित्व / अंतरिक्ष |
| 18 | मेरा निश्चित मत है कि निष्क्रिय प्रतिरोध कठोर-से-कठोर हृदय को भी पिघला सकता है। यह एक उत्तम और बड़ा ही कारगर उपचार है। यह परम शुद्ध शस्त्र है। यह दुर्बल मनुष्य का शस्त्र नहीं है। शारीरिक प्रतिरोध करने वाले की अपेक्षा निष्क्रिय प्रतिरोध करने वाले में कहीं ज्यादा साहस होना चाहिये। | महात्मा गांधी | अहिंसा / प्रतिरोध |
| 19 | सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा चूक, जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक। क्ली ट्रेंड पर बैठकर गई कोकिला कूक, बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक। | नागार्जुन | अहिंसा / सियासत |

| | | | |
|---|---|---|---|
| 328 | वह एक स्त्री है इसलिये प्रणय निवेदन करती है, वह एक स्त्री है इसलिये जीत भी सकती है। दुनिया बहुत सुंदर है जिसे स्त्रियों ने संपूर्ण किया। | शेक्सपियर | स्त्रियों की शक्ति और योगदान |
| 329 | मैं सच कहूंगी मगर फिर भी हार जाऊँगी, वो झूठ बोलेगा और ला-जवाब कर देगा | परवीन शाकिर | स्त्री और न्याय |
| 330 | हे नारी तुम ईश्वर का सृजन मात्र नहीं मानव हृदय का सौंदर्य हो, हमारी सहायिका हो तुम कंवल स्त्री नहीं हमारा स्वप्न हो। | रबीन्द्रनाथ टैगोर | स्त्री का आदर्श और प्रेरणा |
| 331 | निश्चित तौर से सुंदर और ईश्वर की अंतिम संरचना ही स्त्री। | जॉन मिल्टन | स्त्री का दिव्यता और सुंदरता |
| 332 | स्त्री के बिना पुरुष क्रूर हो बना रहता। | - | स्त्री का नैतिक प्रभाव |
| 333 | कत बिधि सूजी नारि जग माहीं। पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं।। | तुलसीदास | स्त्री का पराधीन जीवन |
| 334 | स्त्री आपको जन्म देती है, आपसे प्रेम करती है, आपको संवेदित करती है फिर भी वह एक वस्तु रहती है, क्यों? | डूबोस हेयवर्ड / थॉमस आटवे | स्त्री का वस्तुवादी दृष्टिकोण |
| 335 | रहस्यमय हैं उस स्त्री की उलटबासियाँ, इस स्त्री से डरो। | कात्यायनी | स्त्री की जटिलता और शक्ति |
| 336 | साधारणतः मैंने देखा है कि महिलाएँ आध्यात्मिक, भावात्मक और प्रायः शारीरिक रूप से पुरुषों से ज्यादा मजबूत होती हैं। | ग्रे ओल्डमैन | स्त्री की शक्ति और सहनशीलता |
| 337 | योनि नहीं है रे नारो, वह भी मानवी प्रतिष्ठित, उसे पूर्ण स्वाधीन करो, वह रहे न नर पर अवसित। द्वंद्वे क्षुधित मानव समाज पशु जग से भी है गर्हित, नर-नारी के सहज स्नेह से सूक्ष्म वृत्ति हों विकसित। | सुमित्रानंदन पंत | स्त्री की स्वतंत्रता और समानता |
| 338 | आँसू से भीगे अंचल पर, मन का सब कुछ रखना होगा, तुमको अपनी स्मित रेखा से, यह संधि-पत्र लिखना होगा। | जयशंकर प्रसाद | स्त्री जीवन और संवेदनशीलता |
| 339 | बिना महिलाओं की स्थिति में सुधार किये इस समाज का कल्याण संभव नहीं है, जैसे कि किसी पक्षी के लिये एक पंख से उड़ना संभव नहीं है। | स्वामी विवेकानंद | स्त्री विकास का सामाजिक महत्व |
| 340 | मैं किसी समुदाय के विकास का आकलन उस समुदाय की स्त्रियों द्वारा प्राप्त किये गए विकास के परिमाण से करूंगा। | डॉ. बी.आर. अंबेडकर | स्त्री सशक्तिकरण और समाज |
| 341 | जिस प्रकार एक पक्षी एक पंख से नहीं उड़ सकता उसी प्रकार एक समाज महिलाओं की उपेक्षा करके विकसित नहीं हो सकता। | स्वामी विवेकानंद | स्त्री सशक्तिकरण और समाज |
| 342 | इंसानों की नफरत खत्म हो जाएगी और तानाशाह मर जाएंगे लेकिन स्वतंत्रता कभी खत्म नहीं होगी। | चार्ली चैपलिन | स्वतंत्रता / अटल मूल्य |
| 343 | बंदूकें महत्त्व में सिर्फ संविधान से कम होती हैं, वे लोगों की स्वतंत्रता का दाँत होती हैं। | जॉर्ज वाशिंगटन | स्वतंत्रता / अधिकार |
| 344 | जिस स्वतंत्रता में गलती कर पाने का अधिकार शामिल नहीं हो, उस स्वतंत्रता का कोई मूल्य नहीं है। | महात्मा गांधी | स्वतंत्रता / अधिकार |
| 345 | हो सकता है मैं आपके विचारों से पूरी तरह सहमत न हो पाऊँ, मगर फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों को रक्षा करूंगा। | वॉल्टेयर | स्वतंत्रता / अभिव्यक्ति |
| 346 | यदि बोलने की स्वतंत्रता छीन ली जाए तो शायद गूँगे और मौन हम उसी तरह संचालित होंगे जैसे भेड़ को बलि के लिये ले जाया जा रहा हो। | जॉर्ज वाशिंगटन | स्वतंत्रता / अभिव्यक्ति |
| 347 | बाद मुद्दत के मिले हैं दीवाने, कहने सुनने को बहुत हैं अफसाने, खुली हवा में जरा साँस तो ले लें, कब तक रहेगी आसादी कौन जाने? | अटल बिहारी वाजपेयी | स्वतंत्रता / जीवन दर्शन |
| 348 | हमारे अंदर आज सिर्फ एक ही इच्छा होनी चाहिये और वह है मरने की इच्छा, ताकि हमारा देश जी सके। | सुभाष चंद्र बोस | स्वतंत्रता / देशभक्ति |
| 349 | हमें मानवता को उन नैतिक जड़ों तक वापस ले जाना चाहिये जहाँ से अनुशासन और स्वतंत्रता दोनों का जन्म होता है। | सर्वपल्ली राधाकृष्णन | स्वतंत्रता / नैतिकता |
| 350 | हर व्यक्ति जो 'मिल' का सिद्धांत जानता हो कि एक देश दूसरे देश पर राज करने में फिट नहीं है, उसे ये भी स्वीकार करना चाहिये कि एक वर्ग दूसरे वर्ग पर राज | बी. आर. अंबेडकर | स्वतंत्रता / न्याय |

| | | | |
|---|---|---|---|
| | करने में फिट नहीं है। | | |
| 351 | जो राज करते हैं जम्हूरियत के पर्दे में, उन्हें भी है सर-ओ-सौदा-ए-खाम-ए-आजादी। बनाएंगे नई दुनिया किसान और मजदूर, यही सजाएंगे दीवान-ए-आम-ए-आजादी। | फिराक गोरखपुरी | स्वतंत्रता / लोकतंत्र |
| 352 | जब उलक आसार थे हर इक मसाफत थी बवाल, जब पड़ी जंजीर पैरों में सफर अच्छे लगे। | असअद बदायुनी | स्वतंत्रता / संघर्ष |
| 353 | स्वतंत्रता कभी भी अत्याचारी द्वारा अपनी इच्छा से नहीं दी जाती बल्कि ये पीड़ित व्यक्ति द्वारा अनिवार्य रूप से मांगी जाती है। | मार्टिन लूथर किंग | स्वतंत्रता / संघर्ष |
| 354 | जब मैं निराश होता हूँ मैं याद कर लेता हूँ कि समस्त इतिहास के दौरान सत्य और प्रेम के मार्ग की ही हमेशा विजय होती है। कितने ही तानाशाह और हत्यारे हुए हैं और कुछ समय के लिये वे अजेय लग सकते हैं लेकिन अंत में उनका पतन होता है। | महात्मा गांधी | स्वतंत्रता / सत्य और अहिंसा |
| 355 | सौ में सत्तर आदमी फिलहाल जब नाशाद है, दिल पे रखकर हाथ कहिये देश क्या आजाद है, कोठियों से मुल्क के मेगार को मत आकिये, असली हिंदुस्तान तो फुटपाथ पर आबाद है। | अदम गोंडवी | स्वतंत्रता / समाज |
| 356 | जब तक आप सामाजिक स्वतंत्रता हासिल नहीं कर लेते, कानून आपको जो भी स्वतंत्रता देता है वह आपके किसी काम की नहीं। | भगत सिंह | स्वतंत्रता / सामाजिक न्याय |
| 357 | स्वतंत्रता का अर्थ है कि हम स्वतंत्र स्वर बनें। जहाँ हो मौन दासता यहाँ सदा मुखर बनें, स्वतंत्रता के तीर्थ की सदैव हम डगर बनें। सजीव स्वाभिमान से जिये सदा निडर बनें। | उर्मिलेश | स्वतंत्रता / स्वाभिमान |
| 358 | इंसान का जीवन स्वतंत्र है। इंसान सिर्फ समाज के विकास के लिये नहीं पैदा हुआ है, बल्कि स्वयं के विकास के लिये पैदा हुआ है। | डॉ. बी.आर. अंबेडकर | स्वतंत्रता और व्यक्तिगत अधिकार |
| 359 | मनुष्य सर्वशक्तिमान प्राणी नहीं है, इसलिये वह अपने पड़ोसी की सेवा करने में जगत की सेवा करता है। इस भावना का नाम स्वदेशी है। जो अपने निकट के लोगों की सेवा छोड़कर दूरवालों की सेवा करने या लेने को दौड़ता है, वह स्वदेशी का भंग करता है। | महात्मा गांधी | स्वदेशी / सेवा |
| 360 | स्वतंत्र वही हो सकता है जो अपना काम अपने आप कर लेता है। | विनोबा भावे | स्वावलंबन / स्वतंत्रता |

# अरे ! ये क्या

## ये तो Complete Notes नहीं है

Complete Notes डाउनलोड करने के लिए Google पर Search करे

books.examdhara.com